इस्लाम
आप से क्या चाहता है ?

सैयद हामिद अली

अनुवाद

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही

Islam Aap Se Kya Chahta Hai? (हिन्दी)
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट प्रकाशन न० –14

किताब का नाम : इस्लाम आप से क्या चाहता है? (उर्दू)

लेखक : मौलाना सैयद हामिद अली

प्रकाशकः मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स
D-307, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव,
जामिया नगर, नई दिल्ली–110025
दूरभाष : 26981652, 26984347
E-mail: mmipublishers@gmail.com
E-mail: info@mmipublishers.net
Website: www.mmipublishers.net

पृष्ठ : 112
छठा संस्करण : फरवरी 2019 ई०
संख्या : 500
मूल्य : ₹75.00

ISBN 81-8088-904-1

मुद्रक : एच० एस० प्रिंटर्स, ट्रोनिका सिटी, यू०पी०

क्रम

इस्लाम-मानवता का धर्म	५
अल्लाह से ताल्लुक़	१४
वन्दों के हक़ और अधिकार	३०
चरित्र एवं आचरण	५२
घर का सुधार	७९
इस्लाम का संदेश	८४
लाई पर उभारना और बुराई से रोकना	९३
अल्लाह का बोलवाला करना	९७
अच्छा संगठन	१०१
निष्ठा	१०६
दीन की स्थापना	१०८

प्राक्कथन

यह किताब वास्तव में इस्लाम का एक संक्षिप्त किन्तु पूर्ण परिच
है। इस्लामी शिक्षाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा करने
वाले सज्जन इस किताब से अपनी प्यास बुझा सकते हैं और जो मुसलमान
सच्चे मुसलमान बनने की आरज़ू रखते हैं उन्हें इस किताब से मालूम हो
सकेगा कि इस्लाम के आदेश क्या हैं और अल्लाह का दीन उनसे कि
बातों की अपेक्षा करता है।

लेखक ने इस किताब में जो कुछ लिखा है, क़ुरआन की स्पष्
आयतों और रसूल सल्ल० की प्रामाणिक सुन्नत की रोशनी में लिखा है
बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि क़ुरआन की आयतों और रसूल
सल्ल० की हदीसों का संक्षिप्त टिप्पणी सहित अनुवाद करके उन
एक विशेष शैली में संकलित कर दिया गया है। लेखक ने कमज़ोर औ
मनगढंत हदीसों से बिल्कुल परहेज़ किया है और ऐसी हदीसें ही ली हैं जो
हर पहलू से सही हैं।

हदीसें आम तौर से हदीस की सबसे सही किताबें बुख़ारी औ
मुस्लिम से उद्धृत की गई हैं।

हदीसों की अन्य ६ प्रसिद्ध किताबों (सिहाऐसित्ता) से भी हदी
ली गई हैं मगर जांच परखकर उनसे सिर्फ सही हदीसें ली गई हैं। इन
अतिरिक्त प्रसिद्ध किसी और हदीस की किताब से कोई एक दो हदीसें ह
ली हैं और वह भी केवल उस तरह ली हैं कि क़ुरआन की आयतों य
सही हदीसों से उनकी पुष्टि हो रही है।

यह अल्लाह की कृपा मात्र है कि उसकी तौफ़ीक़ से यह किता
इस्लामी शिक्षाओं का एक प्रमाणित संग्रह बन गई है। आशा है मुसलमा
अपने जीवन को इस्लामी बनाने में इससे पूरा-पूरा फ़ायदा उठायेंगे। आ
इन्सानों तक इस्लाम की दावत पहुंचाने के सिलसिले में भी यह किता
लाभदायक सिद्ध होगी। अल्लाह से हम यही आशा रखते हैं।

अल्लाह—कृपाशील, दयावान के नाम से

इस्लाम-मानवता का धर्म

अल्लाह ने हमें जीवन प्रदान किया, मनुष्य बनाया, अपने पदा किए हुए कितने ही प्राणियों आदि से श्रेष्ठ ठहराया, अच्छी योग्यताएं, शक्तियां और अंग प्रदान किए, धरती पर बसाया और धरती में पाई जाने वाली सारी चीज़ों पर अधिकार दिए—

'निस्संदेह हमने आदम की औलाद को श्रेष्ठता प्रदान की। उसे धरती पर और समुद्र में सवारी दी और उसे पाक चीज़ों की रोज़ी दी और उसे ऐसे बहुतों की अपेक्षा जिन्हें हमने पैदा किया है, बड़ाई दी।' —बनी इस्राईल, ७०

ज़मीन के सारे भंडार और चीज़ों को हमारे लिए पैदा किया—

'अल्लाह ही है जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन की सारी चीज़ें पैदा कीं।' —बकरः, २९

ज़मीन ही नहीं बल्कि सृष्टि की असंख्य चीज़ों को हमारी सेवा म लगा दिया—

'वह अल्लाह ही है जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और आसमान से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा तुम्हारी रोज़ी के रूप में फल निकाले और नौका (या जहाज) को तुम्हारे सेवा-कार्य में लगाया, ताकि समुद्र में उसके हुक्म से चले और नदियों को तुम्हारे सेवा-कार्य में लगाया और सूरज-चांद को तुम्हारे सेवा-कार्य में लगाया कि वे निरंतर चक्कर लगा रहे हैं, और रात और दिन को तुम्हारे सेवा-कार्य में लगाया और तुम्हें वह कुछ दिया

जो तुमने उससे मांगा। यदि तुम अल्लाह को नेमतों को गिनना चाहो तो उन्हें पूरा गिन नहीं सकते। वास्तव में मनुष्य बड़ा अन्यायी और अकृतज्ञ है।' —इब्राहीम, ३२-३४

अगर हम अपने शरीर पर ही दृष्टि डालें तो उसके छोटे-बड़े प्रत्येक अंग को बेहतरीन, स्वय चालित, जटिल और बहुउद्देशीय मशीन पाएंगे जो असाधारण ज्ञान और बुद्धि के साथ बनाई गई और हमारी सेवा के लिए हमें सौंपी गई है। इन अंगों के अन्दर इतनी तत्वदर्शिता, इतना कौशल चमत्कार और इतनी बारीकियां और नज़ाकतें हैं कि साइंस की अत्यधिक उन्नति के बावजूद अक़्ल किसी एक मानवीय अंग की हिकमतों को समझ नहीं सकी है और इंसानी दिमाग़ का तो क्या कहना! कला और विज्ञान और समस्त वैज्ञानिक उन्नति का सेहरा उसी के तो सिर है कि इसी के द्वारा मनुष्य धरती और वायुमंडल पर शासन करने के साथ अन्तरिक्ष में भी यात्राएं करने लगा है और नक्षत्रों तक उसके क़दम पहुंच गए हैं। इस अद्भुत शरीर के साथ विशाल जगत अपने अपार भंडारों के साथ हमारे चतुर्दिक हमारी सेवा और हमारे सोच-विचार के लिए फैला दिया गया है। यह सब अल्लाह को क़ुदरत और हिकमत, उसके पालन कर्तव्य और करुणा के चिन्ह हैं जो हमारे शरीर, धरतो और जगत में हर तरफ़ बिखरे हुए हैं। इन्हें देख कर हमारा दिल परमेश्वर की महिमा और उसकी कृतज्ञता तथा प्रेम की भावना से भर जाता है और बेक़ाबू होकर पुकार उठता है—

'प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब अत्यन्त दयावान और कृपाशील है।' —फ़ातिहा, १-२

हम इन निशानियों से अपने स्रष्टा और स्वामी, अपने पालनहार और उपकारकर्ता और अपने स्वामी व मालिक को पा लेते हैं और निष्ठा एवं श्रद्धा के साथ उसके आगे नतमस्तक हो जाते हैं:—

'ऐ अल्लाह! हम तेरी ही बंदगी करते हैं और तुझ ही से मदद चाहते हैं।' —फ़ातिहा ४

जिस प्रभु ने हमें असंख्य नेमतें प्रदान कीं, जिसके हाथ में हमारी दुनिया और हमारी आख़िरत है, जिसके तनिक संकेत से हमारी सफलता और विफलता सम्बद्ध है, बुद्धि, शिष्टता और मानवता हर एक की अपेक्षा है कि हम उसकी और केवल उसी की बन्दगी करें—

'ऐ इन्सानो! अपने रब की बंदगी करो, जिसनें तुम्हें और तुम से पहले के लोगों को पैदा किया—उम्मीद है कि इस तरह तुम

(दुनिया और आखिरत की विफलताओं से बच सकोगे—) जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन का फर्श बनाया और आसमान की छत और आसमान से पानी बरसाया तो उससे तुम्हारे खाने के लिए फलों को पैदा किया। सो जब तुम इन बातों को जानते ही हो तो अल्लाह की बंदगी में उसका किसी को शरीक न ठहराओ।'
—बक़रः, २१

अल्लाह की बंदगी और आज्ञापालन ही का दूसरा नाम इस्लाम है। ाम का अर्थ है स्वयँ को अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन में अर्पित देना, स्वयं को अल्लाह के हवाले कर देना—

'हां! जिसने अपने आपको पूरे भक्ति-भाव के साथ अल्लाह के हवाले कर दिया, और वह निष्ठावान तथा नेक है| उसके लिए उसके रब के पास उसका बदला है ऐसे लोगों के लिए (आखिरत में) न कोई भय की बात है और न वे दुखी होंगे।'
—बकरः ११२

जो लोग स्वयं को अल्लाह की बंदगी और आज्ञानुपालन में दे द, ो वास्तव में मुस्लिम हैं:—

'और हम उसी के आज्ञाकारी (मुस्लिम) है।' —बक़रः १३६

अल्लाह की बंदगी और अपने आप को उस के सुपुर्द करना ारी प्रकृति की पुकार है। जिसने हमें जीवन प्रदान किया, अच्छे से च्छा शरीर और अति उत्तम योग्यताएं एवं शक्तियां दीं, जो प्रत्येक क्षण में पाल रहा है, जिसने हमारी सेवा में पूरी सृष्टि को लगा दिया है, हम ों न उसके बन्दे और सेवक बनें, उसका शुक्र अदा करें, उसके प्रेम में न्मत्त हों और स्वयं को उसकी प्रसन्नता में गुम कर दें—

'अतः हर ओर से कटकर अपना रुख़ इस दीन की ओर जमा दो। यह दीन अल्लाह की प्रकृति है, जिस पर उसने इंसानों को पैदा किया है।'
—रूम, ३०

इस्लाम स्वाभाविक धर्म ही नहीं, सम्पूर्ण जगत का धर्म भी है। यह सार जिसके अन्दर हम रहते-बसते हैं, जिसके नियमों के बन्धन में हम कड़े हुए हैं और जो कुछ करते हैं, इन नियमों के अन्तर्गत ही कर सकते , जिसके नियमों के ज्ञान और उसके उचित प्रयोग ही पर हमारा सारा ौतिक विकास निर्भर करता है, क्योंकि विज्ञान प्रकृति के नियमों के ज्ञान ी को कहते हैं—या सृष्टि अपने असीम फैलाव के साथ अल्लाह के नियत

किए हुए नियमों की पाबन्द है और उसके आज्ञापालन में लगी हुई ।
हम अल्लाह से विद्रोह करेंगे तो सृष्टि-व्यवस्था से हमारा टकराव हो
और हम तबाह हो जायेंगे—

'क्या ये लोग अल्लाह के दीन (इस्लाम) के सिवा कोई और दीन चाहते हैं, हालांकि आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है, स्वेच्छा के साथ, ख़ुशी से या विवशतापूर्वक उसी का आज्ञापालन कर रहा है और सबको उसी की तरफ़ लौटना है।'

—आले इमरान, ८३

एक और दृष्टि से विचार कर। अल्लाह ने हम मनुष्यों को अप
योग्यताएं और शक्तियां और अत्यधिक साधन प्रदान किए हैं। इनसे ह
दुनिया और मानव-जाति के निर्माण तथा विकास का काम भी ले सकते
और तबाही तथा विनाश का भी। मनुष्य को अगर इनका उचित प्रयो
न बताया गया और उसे जीवन व्यतीत करने की सीधी राह न दिखाई ग
तो वह स्वयं भी तबाह होगा और दुनिया को भी तबाह करेगा। मा
दर्शन और रहनुमाई मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता है और उस
कल्याण एवं सफलता के लिए सर्वप्रथम शर्त की हैसियत रखती है, लेकि
क्या मनुष्य स्वयं इस आवश्यकता को पूरा कर सकता है ? अब तक व
अनुभव साक्षी है कि नहीं कर सकता। मनुष्य का ज्ञान अपूर्ण, उसक
विचारशीलता सीमित, उसकी समझ मतभेदों में गुम और उसकी बु
कामनाओं और स्वार्थों के वशीभूत और सामयिक परिस्थितियों तथा घट
नाओं से प्रभावित है। मनुष्य की इस सबसे बड़ी आवश्यकता को ईश्व
ही पूरा कर सकता है, जो कामनाओं और लाभ-हानि की चिंता से उच्च
है, जो किसी चीज़ से प्रभावित नहीं होता, जिसका ज्ञान पूर्ण और जिसक
समझ अचूक है, जिसने मानव और उसकी प्रकृति को बनाया और ज
उसका स्वभाव, उसकी सफलता और विफलता के सारे पहलुओं से भली
भांति परिचित है।

मनुष्य अकेला जीवन व्यतीत नहीं करता, उसका परिवार है, पड़ोसी
और सम्बन्धी हैं मुहल्ले और बस्ती वाले हैं, देश और राष्ट्र के लोग हैं औ
फिर सम्पूर्ण मानव-जाति है। इन सबसे उसके सम्बन्ध होते हैं और उनके
उससे। इन सब पर इसके अधिकार हैं और उस पर इन सबके अधिकार हैं
आवश्यकता है कि सारे मनुष्यों से उसके सम्बन्ध न्यायसंगत हों, उन सबके
बीच वह न्याय और संतुलन का रास्ता अपना सके। उसके पास

ऐसी जीवन प्रणाली होनी चाहिए जो उस के परिवार के, उस के समाज तथा उस की क़ौम के और समस्त मानव-जाति के लिए न्याय, करुणा तथा उन्नति और सफलता की गारण्टी दे। जिसमें सारे ही मनुष्यों की सभी समस्याओं का समाधान हो सके और जिसमें मनुष्य के बाह्यांतर, देह एवं आत्मा, मन, मस्तिष्क व्यक्ति और समाज, स्त्री तथा पुरुष, पूंजी-पति और मज़दूर, शासक और जनता, काले और गोरे, सबके लिए सुख, शांति, सफलता और उन्नति का पूरा-पूरा प्रावधान हो। मनुष्य की बुद्धि आज तक इस आवश्यकता में मनुष्य के काम न आ सकी और न आगे कभी इस आवश्यकता को पूरा कर सकती है।

यही नहीं आज तक इंसान की अक़्ल इन्सान को इन्सान बनाने का हल तक खोज न सकी, उसके दिल में कोई ऐसा डर पैदा न कर सकी जो उसे नियन्त्रण में रखे और प्रत्येक अवस्था में ज़िम्मेदार बनाए, कोई शिक्षा-प्रणाली न दे सकी, जो मनुष्य को चरित्रवान और मानवता-प्रेमी बना सके, जो नस्ल, रंग और देश के भेदभाव से दूर होकर सारे मनुष्य से न्याय और प्रेम करना सिखाए और सबको निस्वार्थ सेवा पर उसे उभारे। परि-णाम यह हुआ कि अत्यधिक वैज्ञानिक उन्नति के वावजूद मानव-संसार दुखों और मुसीबतों से कराह रहा है। मनुष्य की अमूल्य शक्तियां और उनके साधन युद्ध और संघर्ष में लग रहे हैं और विश्वव्यापी तबाही और विनाश सामने दिखाई दे रहा है—

'धरती और समुद्र में मनुष्यों के अपने करतूतों के कारण बिगाड़ छा गया है।' —रूम, ४१

अल्लाह का दीन, इस्लाम, मनुष्य की इन्हीं बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने आया है। वह मनुष्य को सही रास्ता बताता है। ऐसा रास्ता, जो उसके सम्पूर्ण जीवन को सफल बनाए, उसकी सारी क्षमताओं और शक्तियों को विकसित करे, बढ़ाए, जिस पर चलकर मनुष्य अपने ही लिए नहीं, दुनिया के लिए रहमत सिद्ध हो सके।

अल्लाह का दीन, इस्लाम, मनुष्य को ऐसी जीवन-प्रणाली देता है जो परिवार, जाति, क़ौम और मानव-जाति सबके अधिकार न्याय युक्त रूप से निर्धारित करता है। न्याय और संतुलन के साथ सब की समस्याओं का समाधान करता है। इंसानी ज़िंदगी के विभिन्न विभागों और मानव-जाति की विभिन्न जातियों और वर्गों को ऊपर उठाने के साधन जुटाता है और मनुष्य के बाह्यांतर, देह, आत्मा और मन-मस्तिष्क सब के लिए सुख-

शांति, परितोष और सफलता की ज़मानत देता है तथा दुनिया और आखि
रत दोनों में उसके लिए सफलता की राहें खोलता है।

अल्लाह का दीन, इस्लाम, मनुष्य को मनुष्य बनाता है, वह मनुष्
के दिल में अल्लाह की बड़ाई और उसका भय बिठाता है, उसका प्रे
और उसके लिए शुक्र, विनय और भक्ति के भाव दिल और दिमाग़ मे
विकसित करता है। उसे बताता है कि अल्लाह हर समय, हर जगह उसवे
साथ है। उसकी एक-एक हरकत उसकी दृष्टि में है और एक-एक विचा
उसे ज्ञात है। उसके फ़रिश्ते हर समय, हर जगह मनुष्य को घेरे हुए
और उसकी पूरी ज़िन्दगी का रिकार्ड कर रहे हैं। आखिरत में हर इन्सा
उस रिकार्ड के साथ अल्लाह की अदालत में पेश होगा, जहाँ से ईमान औ
भले कार्यों के फलस्वरूप उसके लिए स्वर्ग और उसकी सदैव रहने वाल
तथा असंख्य नेमतों का फ़ैसला होगा और अगर मनुष्य इन चीज़ों से वंचि
है तो उसे नरक और उसके दर्दनाक और अपमानजनक अज़ाब का सामन
करना पड़ेगा। आखिरत का उत्तरदायित्व स्वर्ग के दैवी प्रसादों तथा नर
की भीषण यातनाओं का विश्वास मनुष्य को प्रत्येक अवस्था में उत्तरदाय
और चरित्रवान बनाए रखता है।

इस्लाम उपासनाओं की एक पद्धति प्रस्तुत करता है। यह पद्धा
अल्लाह से मनुष्य के सम्बन्ध के मज़बूत करने और उसे विकसित कर
तथा मानव को मानवता और चरित्र की प्रतिमूर्ति बनाने के सम्बन्ध
सबसे अच्छा पार्ट अदा करती है।

इस्लाम की नैतिक शिक्षाएं भी उच्च कोटि की हैं। इस्लाम
अनुसार अच्छे शील-स्वभाव का असाधारण बदला मिलेगा। वह चरि
हीनता के लौकिक-पारलौकिक दुष्परिणामों से सावधान करता है। नैति
सिद्धांतों को राजनीति और आर्थिक क्षेत्र सहित पूरे जीवन का सूत्र-ध
और शासक ठहराता है। जीवन के समस्त विभागों को उच्च नैतिकता
रंग में रंगने का प्रबन्ध करता है। नैतिक मूल्यों को व्यक्ति, कुटुम्ब, जा
राष्ट्र और देश प्रत्येक चीज़ से सर्वोपरि बताता है। मुस्लिम समुदाय त
इस्लामी राज्य का लक्ष्य यह बताता है कि नेकियों का प्रचार करें औ
बुराइयों को समाप्त करें--

> 'ये वे लोग हैं कि अगर हम इन्हें ज़मीन में सत्ता प्रदान करें तो
> नमाज़ स्थापित करें, ज़कात दें, नेकी का आदेश दें और बुराइयों
> से रोकें।' —हज, ४१

इस्लाम सारे मनुष्यों को एक प्रभु का बनाया हुआ, एक मां-बाप की औलाद, एक परिवार और कुटुम्ब बतलाता है। सब की जान-माल और इज़्ज़त को प्रतिष्ठित ठहराता है। सब को न्याय पाने का बराबर का अधिकारी बतलाता है और सबकी सेवा और सब के साथ सद्व्यवहार का आदेश देता है।

इस्लाम बंदों के अधिकारों को असाधारण महत्त्व प्रदान करता है। वह मां-बाप, सम्बन्धियों, पड़ोसियों, ग़रीबों, यतीमों, विधवाओं, यात्रियों, दासों एवं सेवकों और तात्पर्य यह कि सारे इन्सानों, चाहे वे मुस्लिम हों या ग़ैर मुस्लिम, सबके अधिकार और हक़ बयान करता है और इनके पूरा करने को अनिवार्य बतलाता है। वह कहता है कि मनुष्य की नेकियां और उपासनाएं व्यर्थ सिद्ध होंगी अगर उसने बन्दों के अधिकारों पर डाका डाला होगा। किसी का मारा हुआ हक़ माफ़ न किया जाएगा, जब तक वह स्वयं माफ़ न कर दे जिसका हक़ मारा गया है।

यह है इस्लाम! अल्लाह का यह दीन मानवता की सबसे बड़ी ज़रूरत और इंसान के लिए अल्लाह की सबसे बड़ी नेमत है। स्वयं अल्लाह ने इसे अपनी नेमतों का पूर्ण रूप बतलाया है क्योंकि यह दीन बतलाता है कि नेमतों को कहां और कैसे इस्तेमाल करें, जिसके कारण अल्लाह की ये नेमतें इन्सान के लिए वास्तव में नेमत बन जाती हैं और वह दुनिया और आख़िरत दोनों में सफल हो जाता है। अगर अल्लाह की ये नेमतें उसके निर्धारित ढंग से प्रयोग न की गईं तो वही दुनिया और आख़िरत के प्रकोप का रूप धारण कर लेती हैं :—

'आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन पूरा कर दिया, तुम पर अपनी नेमतों की पूर्ति कर दी और इस्लाम को तुम्हारे दीन की हैसियत से मैंने पसन्द कर लिया।' —माइदा, ३

'अगर तुमने (मेरी बंदगी करके) कृतज्ञता दिखलाई तो मैं तुम्हें और अधिक दूंगा और यदि तुम (सत्य धर्म से विमुख हो कर) अकृतज्ञ बने तो (जान लो) मेरा अज़ाब बहुत सख़्त है।'

—इब्राहीम, ७

यही कारण है कि अल्लाह को इस्लाम के अलावा कोई धर्म इन्सानों के लिए पसन्द नहीं, जो व्यक्ति इस्लाम के सिवा किसी और धर्म को अपनाएगा, वह अल्लाह को नाराज़ और अपनी आख़िरत को ख़राब करेगा और उसके सारे कर्म अल्लाह के यहां अस्वीकृत होकर व्यर्थ जाएंगे—

'और जो कोई इस्लाम के सिवा कोई और दीन चाहेगा तो उस

का वह दीन (खुदा के यहां) स्वीकार न होगा और वह आखिरत में तबाह और बर्बाद होकर रहेगा।' —आले इम्रान, ८५

यह दीन इन्सान को दुनिया में भी सफल बनाता और उसे उच्च स्थान प्रदान करता है। सूर: आले इम्रान में है :—

'सुस्त न पड़ो और दुखी न हो यदि तुम (सचमुच) ईमान वाले हो तो तुम ही ऊंचे रहोगे।' —आले इम्रान, १३९

और इतिहास के पन्ने साक्षी हैं कि सहाबा (रज़ि०) नें जब इस्ला का हक़ अदा किया तो वे गुमनामी से उठे और सभ्य दुनिया के बहुत ब हिस्से पर छा गए और उन्हें वे तमाम सफलताएं और उच्चताएं प्राप्त हु जिनकी इस दुनिया में कल्पना की जा सकती थी और उनके सम्बन्ध अल्लाह का यह वायदा पूरा हुआ—

'तुममें से जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कार्य किए (सत्य धर्म का हक़ अदा किया) अल्लाह ने उनसे वायदा किया है कि उन्हें ज़मीन में खिलाफ़त और सत्ता प्रदान करेगा, जिस प्रकार उनसे पहले के लोगों को उसने सत्ता प्रदान की थी, उनके उस दीन को, जिसे उसने उनके लिए पसन्द किया है स्थायित्व प्रदान करेगा और उनका (वर्तमान) भय सुख-शान्ति में बदल देगा। वे मेरी ही बन्दगी करेंगे, मेरे साथ किसी को शरीक न करगे।' —नूर, ५५

और अल्लाह की खुशी और आखिरत की सफलता के बारे अल्लाह नें पहले ही से ऐलान कर दिया—

'निस्संदेह जो लोग ईमान लाए और भले काम किए, वही लोग सर्वश्रेष्ठ जन हैं, उनका बदला उनके रब के यहाँ सदाबहार बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, जिनमें वे सदैव अनन्त तक रहेंगे। अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से। यह उसके लिए है जो अपने रब से डरे।' —अल-बय्यिन: ७-८

अल्लाहु अकबर! कितना ऊंचा है यह स्थान! 'अल्लाह उन राज़ी हुआ और वे अल्लाह से।'

क़ुरआन मजीद की इन आयतों से स्पष्ट है कि दुनिया और आखिरत की कामियाबी केवल सहाबा रज़ि० के लिए ही खास नहीं है, बल्कि उन सारे मनुष्यों के लिए है जो ईमान लाएं और भले कार्य करें। अल्ला से डरकर उसकी अवज्ञा से बचकर ज़िन्दगी गुजारें। दूसरे शब्दों में य कि अल्लाह के भेजे हुए दीन इस्लाम का हक़ अदा करें।

अल्लाह से ताल्लुक़

(अगले पृष्ठों में हम इस्लाम की बुनियादी शिक्षाओं का वर्णन करेंगे
र बतायेंगे कि अल्लाह के दीन के सिलसिले में उसके मानने वालों की
ा ज़िम्मेदारियां होती हैं।)

इस्लाम का अर्थ है अल्लाह की बंदगी, आज्ञापालन और अपने आप
उसके हवाले कर देना। इस दृष्टि से आप देखें तो मालूम होगा कि
ल्लाह से ठीक और जीवंत संबंध इस्लाम की महत्वपूर्ण बुनियाद ही नहीं,
ल्क वास्तव में यही सारा इस्लाम है। स्वयं अल्लाह के रसूल सल्ल० ने
ढ़तापूर्वक अल्लाह के मानने को ही सम्पूर्ण इस्लाम घोषित किया है—

'सुफ़ियान बिन अब्दुल्लाह सक़फ़ी रज़ि० से उल्लिखित है कि मैंने
पूछा, ऐ अल्लाह के रसूल ! इस्लाम के बारे में मुझे ऐसी बात
बता दीजिए कि आप के बाद मुझे किसी से पूछना न पड़े। प्यारे
नबी सल्ल० ने फ़रमाया :—कहो, मैं अल्लाह पर ईमान लाया
फिर इस पर जम जाओ।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अल्लाह से सम्बन्ध जोड़ने और उस पर जमे रहने के फलस्वरूप
मिन (ईमान वाले) को दुनिया और आख़िरत की सफलता प्राप्त होती
जैसा कि क़ुरआन मजीद में है :—

'जिन लोगों ने कहा हमारा रब अल्लाह है, फिर उस पर जम
गए, उन पर फ़रिश्ते उतरेंगे (और कहेंगे) कि डरो नहीं और न
दुखी हो, बल्कि उस जन्नत की ख़ुशख़बरी लो, जिस का तुम से
वायदा किया जाता था। हम सांसारिक जीवन में भी तुम्हारे
साथी हैं और आख़िरत में भी (तुम्हारे साथी हैं), वहां तुम्हारे
लिए वह कुछ है जिसको तुम्हारा जी चाहेगा और तुम्हारे लिए
वह कुछ है जिस को तुम मांगोगे। यह आतिथ्य-सत्कार है अत्यन्त
क्षमाशील और दयावन्त (अल्लाह) की ओर से।'

—हामीम, सजदः ३०-३२

अब हम अल्लाह पर ईमान और उस से संबंध स्थापित करने के
विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करेंगे।

केवल अल्लाह को माबूद (पूज्य) बनाइए

इस्लाम की सबसे अहम और बुनियादी शिक्षा यह है कि अल्लाह ही पूज्य है, उसके अलावा कोई पूज्य नहीं—'ला इला-ह इल्लल्लाह'—सृष्टि और मानव का बनाने वाला, मालिक, पालनहार और हाकिम सिर्फ़ अल्लाह है। उसके सिवा न कोई खुदा है, न पालनहार, न मालिक है न हाकिम। खुदा होने में कोई उसका शरीक नहीं, संसार में उस के सिवा किसी का हुक्म नहीं चलता, उसके अलावा किसी के हाथ में कुछ नहीं, वही जरूरतों को पूरा करता है और वही कठिनाइयों को दूर करता है तथा मुक्ति और कल्याण उसी के हाथ में है। मुसीबत और जरूरत में वही इन्सान के काम आता है, वही इस योग्य है कि इंसान उसकी इबादत और बन्दगी करे और उसके आगे नतमस्तक हो। उस के अलावा बन्दगी, इबादत और दुआ के योग्य कोई नहीं। यही सारे नबियों और पैग़म्बरों का संयुक्त और मौलिक आह्वान था :—

> 'हम ने तुम से पहले जो रसूल भी भेजे, उन की ओर यही वह्य भेजी कि मेरे अलावा कोई पूज्य नहीं, तो तुम मेरी ही बन्दगी करो।'
>
> —अंबिया, २५

अल्लाह के सिवा किसी और को पूज्य मानना, किसी की उपासना करना और उस से मदद मांगना या दुआ करना अल्लाह के साथ शरीक बनाना है, और अल्लाह के साथ किसी को शरीक ठहराना ऐसा अपराध है जिसे अल्लाह माफ़ नहीं करेगा :—

> 'बेशक अल्लाह इस जुर्म को माफ़ न करेगा कि उसके साथ किसी को शरीक किया जाये, और इस से नीचे के गुनाह जिसके लिए चाहेगा माफ़ कर देगा।
>
> —सूरः निसा, ४८-११६

अल्लाह की इबादत कीजिए

अल्लाह ने हमें पैदा किया, वही हमें पाल रहा है। वही हमारी हर जरूरत पूरी करता है। हम सिर से पैर तक उसके उपकारों में डूबे हुए हैं। इन बातों का एहसास हमें बेचैन कर देता है कि हम कृतज्ञता, विनय और भक्ति की प्रतिमूर्ति बन कर उस के आगे झुक जायें। निष्ठा और श्रद्धा से उसका गुण-गान करें। उसकी वफ़ादारी और वन्दगी के प्रति वचनवद्ध हो

ौर अपना सब कुछ उसके सामने निछावर कर द। बस यही इबादत और उपासना है। प्रत्येक शुद्ध प्रकृति वाला मनुष्य, जो अल्लाह को पहचानता ो, अवश्य ही उस की इबादत की तरफ़ झुकेगा। यह अल्लाह की कृपा है क उस ने हमें इबादत करना भी सिखाया और बताया कि हम भक्ति और न्दगी की भावनाओं को किस प्रकार प्रकट करें।

इस्लाम ने जो इबादतें हमें सिखाई हैं, वे ऐसी हैं कि उन से भक्ति-ाव भी व्यक्त होता है और उनके द्वारा हम अल्लाह की वफ़ादारी और सकी बन्दगी के लिए प्रतिज्ञाबद्ध भी होते है। अल्लाह की प्रसन्नता और सका सामीप्य प्राप्त करने की वे ज़मानत भी देती हैं। इनके द्वारा आदमी क अच्छा बन्दा और एक अच्छा इंसान भी बनता है।

ये इबादतें सम्पूर्ण इस्लामी जीवन की आधार-शिला हैं तथा ईमान के बाद सारी नेकियों और भलाइयों का यही स्रोत भी। इसलिए ईमान के ाद सब से अधिक उच्च स्थान इन्हीं को प्राप्त है। ये इबादतें अल्लाह को बसे ज़्यादा प्रिय हैं और इस्लाम में सब से बढ़ कर अभीष्ट भी। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है :—

> 'इस्लाम की बुनियाद पांच चीज़ों पर है। इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई बन्दगी के लायक़ नहीं और मुहम्मद सल्ल० उसके बन्दे और उसके रसूल हैं। नमाज़ का आयोजन करना, ज़क़ात देना, हज करना और रमज़ान के रोज़े रखना।'
> —बुख़ारी, मुस्लिम

ये इस्लाम के पाँच आधारभूत स्तम्भ हैं, जिन पर इस्लाम की पूरी इमारत खड़ी होती है। इस्लाम की राह पर चलने के लिए इन पांचों चीज़ों का हक़ अदा करना आवश्यक है। जो व्यक्ति इन का हक़ अदा नहीं करता वह इस्लाम का हक़ अदा नहीं कर सकता। यही कारण है कि क़ुर-आन और हदीस दोनों में इन इबादतों की असाधारण रूप से ताकीद की गई है और इन का हक़ अदा करने का अत्यधिक बदला और इनाम बतलाया गया है। और इसके विपरीत इनमें असावधानी और कोताही दिखाने पर भीषण यातना की चेतावनी दी गयी है। इन इबादतों का यही असाधारण महत्व है, जिन की वजह से नबी सल्ल० ने विशेष हदीसे जिब्रील में प्रश्न-कर्ता के पूछने पर इन्हें साक्षात इस्लाम कहा है :—

> 'कहो, ऐ मुहम्मद ! मुझे बताओ कि इस्लाम क्या है ? फ़रमाया, इस्लाम यह है कि तुम इस बात की गवाही दो कि अल्लाह के

सिवा कोई बन्दगी के योग्य नहीं और मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं। नमाज़ की स्थापना करो। ज़कात दो, रमज़ान के रोज़े रखो और काबे का हज करो, अगर तुम वहां पहुंचने का सामर्थ्य रखते हो।' —बुख़ारी, मुस्लिम

इस हदीस से स्पष्ट हो जाता है कि इन कामों का दीन (धर्म) में क्या स्थान है।

अल्लाह को याद कीजिए

अल्लाह ने हम पर जो बड़े उपकार किये हैं, उन पर अल्लाह का कृतज्ञ बनने और उस से प्रेम करने का तक़ाज़ा है कि हम अल्लाह को अधिक से अधिक याद करें। इस प्रकार हम उस से और अधिक प्रेम करने लगेंगे। इस से उसका ध्यान और भी अधिक बना रहेगा। हमारे हृदय में उसका भय भी अधिक उत्पन्न होगा। हमारे अन्दर विनय, भक्ति और समर्पण के भाव विकसित होंगे और हम अल्लाह की इच्छा और उसके दीन पर ज़्यादा से ज़्यादा अमल कर सकेंगे और इस सब के नतीज़े में हम अल्लाह की मुहब्बत के पात्र हो जायेंगे। क़ुरआन मजीद में है :—

'तुम मुझे याद करो मैं तुम्हें याद करूंगा।'

—बक़र:, १५२

जिसे अल्लाह याद करे और याद रखे, उसे और क्या चाहिए! दुनिया और आख़िरत में उसे किस चीज़ की कमी!

कठोर और कठिन परिस्थितियों में हम सत्यमार्ग पर उसी समय जमे रह सकते हैं, जब हमारा संबंध अल्लाह से गहरा, जीवन्त और सुदृढ़ हो और हम ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह को याद करते हों :—

'ऐ ईमान वालो! जब किसी गिरोह से तुम्हारी मुठभेड़ हो जाये तो जम कर मुक़ाबला करो और अल्लाह को ज़्यादा से ज़्यादा याद करो, उम्मीद है कि तुम सफल होंगे।' —अनफ़ाल, ४५

अल्लाह के सच्चे बन्दे, जो अल्लाह से मुहब्बत रखते हैं और हर हाल में उसकी राह पर चलना चाहते हैं, वे खड़े, बैठे, लेटे प्रत्येक दशा में अल्लाह को याद करते हैं। क़ुरआन मजीद में है :—

'ये वे लोग हैं जो अल्लाह को याद करते हैं खड़े, बैठे, और लेटे।' —आले इम्रान, १९१

अल्लाह की याद और उस के स्मरण का सब से उत्तम रूप नमाज़ है। क़ुरआन मजीद में है :–

'नमाज़ का मेरी याद के लिए आयोजन करो।'

—ताहा, १४

अल्लाह् के ज़िक्र (स्मरण) का दूसरा महत्वपूर्ण रूप समझ और विनम्रता के साथ क़ुरआन-पाठ है :-

'जिस किताब की वह्य (प्रकाशन) तुम्हारी तरफ़ हुई है उसका पाठ करो और नमाज़ का आयोजन करो।' —अ'कबूत, ४५

अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है :—

'बस दो व्यक्ति हैं, जिनसे ईर्ष्या की जा सकती है। एक वह व्यक्ति जिसे अल्लाह् ने क़ुरआन (का ज्ञान) दिया हो और वह रात-दिन क़ुरआन के पाठ का हक़ अदा करता हो। दूसरा वह व्यक्ति जिसे अल्लाह् ने दौलत प्रदान की हो तो वह उसमें से रात-दिन (अल्लाह् की राह में) खर्च करता हो।' -बुखारी, मुस्लिम

अल्लाह् की याद की एक और प्रभावकारी विधि दुआ (प्रार्थना) है, जो रो-रो कर और गिड़गिड़ा का अल्लाह् से की जाये :-

'अपने रब से दुआ मांगो गिड़गिड़ा कर और चुपके-चुपके। निस्संदेह वह सीमा उल्लंघन करने वालों को पसन्द नहीं करता।'

—आराफ़, ५५

क़ुरआन मजीद की इस आयत से विदित होता है कि अल्लाह् से दुआ न मांगना या अल्लाह् के अलावा किसी और से दुआ मांगना बन्दगी की सीमाओं का उल्लघंन करना है। दुआ भक्ति और विनय-भाव का प्रतीक है। अगली आयत में अल्लाह् ने फिर फ़रमाया:-

'अल्लाह् से दुआ माँगो, उस से डर कर और (उस की रहमत की) उम्मीद करके निःसन्देह अल्लाह् की रहमत नेक और सच्चे बन्दों के समीप है।'

—आराफ़, ५६

ज्ञात हुआ कि दुआ जो भय और आशा के मिले-जुले भाव के साथ मांगी जाए, वह अच्छी बन्दगी भी है और अल्लाह् की रहमत को अपनी ओर आकृष्ट करने का उपाय भी। हदीस में है :—

'नोमान बिन बशीर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया :—दुआ प्रत्यक्ष उपासना है, फिर आप सल्ल० ने यह आयत पढ़ी-और तुम्हारे रब नें कहा, मुझ से दुआ माँगो, मैं तुम्हारी दुआ पूरी करूंगा। जो लोग मेरी इबादत से मुख मोड़ते हैं, वे अपमानित होकर नरक में प्रवेश करेंगे।'

—तिर्मिज़ी, अबूदाऊद, नसई, इब्ने माजा, अहमद

आयत और हदीस दोनों से मालूम हुआ कि दुआ प्रत्यक्ष उपासना है।

अल्लाह की याद की एक और प्रभावकारी विधि यह है कि विभिन्न घड़ियों में अल्लाह को याद करते रहें, जिस प्रकार अल्लाह के नबी सल्ल० अल्लाह को याद करते थे। यह बात ऊपर आ चुकी है कि अल्लाह के सच्चे बन्दे खड़े, बैठे, लेटे प्रत्येक अवस्था में अल्लाह को याद करते हैं। अल्लाह के रसूल सल्ल० का आदर्श इस सिलसिले में सब से अच्छा आदर्श है। अल्लाह के रसूल सल्ल० विभिन्न घड़ियों में विभिन्न कार्य करते समय अल्लाह को किस प्रकार और किन शब्दों में याद करते थे, हदीसों के भंडार में आज भी यह सब कुछ सुरक्षित है, काश इन अमूल्य मोतियों से हम अपनी झोली भर सकते।

हदीसे क़ुदसी में है कि अल्लाह फ़रमाता है :—

'मैं अपने बंदे के ख़्याल के अनुसार हूं, जो वह मेरे बारे में रखता है और मैं उसके साथ होता हूं जब वह मुझे याद करता है। तो अगर वह मुझे अपने जी में याद करता है तो मैं भी उसे अपने जी में याद करता हूं। और अगर मुझे किसी सभा में याद करता है, तो मैं उससे उत्तम सभा में उसे याद करता हूं।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

कितनी ईमान बढ़ाने वाली और प्राणवर्धक है यह हदीस ! जो अल्लाह को याद करता है, अल्लाह उसे याद करता है और उसके साथ होता है।

तौबा और क्षमा-याचना

अल्लाह के स्मरण की एक और प्रभावशाली विधि तौबा और क्षमा-याचना है। जब भी हम से कोई छोटी या बड़ी ग़लती हो जाये—और ग़लती किस से नहीं होती—तो हम लज्जित हों, पश्चाताप करें। रो-रो कर अपने गुनाहों की माफ़ी मांगें। आगे के लिए गुनाहों से बचने और ईश-भक्ति की राह पर चलने की प्रतिज्ञा करें। क़ुरआन मजीद में तौबा की प्रेरणा इस प्रकार दी गयी है।

'ऐ ईमान लाने वालो ! अल्लाह से तौबा करो, निर्मल और सच्ची तौबा, आशा है कि तुम्हारा रब तुम से बुराइयों को दूर कर देगा और तुम्हें ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेगा, जिन के नीचे नहरें बहती होंगी।' —तहरीम, ८

तौबा गुनाहगारों ही की नहीं बल्कि परहेज़गारों की भी विशेषता है जैसा कि क़ुरआन मजीद में है :—

'और अल्लाह के बन्दे रात की अन्तिम घड़ियों में क्षमा-याचना करते हैं।'

—आले इम्रान, १७

तौबा के सम्बन्ध में अल्लाह के सब से अधिक समीपवर्ती बन्दे (हज़- मुहम्मद सल्ल०) का जो हाल था वह उन के इन शब्दों से प्रकट है :—

'ऐ लोगो ! अल्लाह से तौबा किया करो। मैं स्वयं एक-एक दिन में सौ-सौ बार उस से तौबा करता हूं।

—मुस्लिम

तौबा अल्लाह को कितनी अधिक प्रिय है, इसका अनुमान इस हदीस क्या जा सकता है :—

'अल्लाह अपना हाथ रात में फैलाता है, ताकि दिन में जिस से पाप हो गया हो वह तौबा कर ले, और दिन में अपना हाथ फैलाता है ताकि रात में जिस से कोई पाप हो गया हो वह तौबा कर ले। वह ऐसा करता रहेगा जब तक सूरज पश्चिम से न निकलने लगे।'

— मुस्लिम

वास्तव में मनुष्य का अपनी जांच-पड़ताल करते रहना और अपनी तियों पर अल्लाह से माफ़ी चाहते रहना, उसके सुधार और आत्म- ास के लिए अति उत्तम विधि है।

निज का निखार और आत्म विकास वह चीज है जो अल्लाह को पसन्द है, इसीलिए तौबा से गुनाह तो माफ़ होते ही हैं, साथ ही साथ ा अल्लाह की मुहब्बत, उसकी रहमत और उसके सामीप्य का अधि- ी हो जाता है।

और वास्तव में यह भी अल्लाह की याद की एक उत्तम विधि है कि ा अल्लाह की किताब और उसके दीन की शिक्षाओं को सीखे, सिखाए : अल्लाह के सभी बन्दों में इन शिक्षाओं को फैलाने में लगा रहे :—

'तुम में सबसे अच्छा व्यक्ति वह है जो क़ुरआन सीखे और उसे सिखाए।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

एक और हदीस में क़ुरआन का सामूहिक अध्ययन करने और उसके ने-पढ़ाने का वर्णन इस प्रकार हुआ है :—

'...और जो लोग अल्लाह के किसी घर (मस्जिद) में एकत्र होकर अल्लाह की किताब को पढ़ते हैं और उसे पढ़ाते, समझाते हैं उन पर अवश्य ही 'सकीनत' उतरती है (अल्लाह की) रहमत उनको ढांप लेती है, फ़रिश्ते उन पर साया करते हैं और अल्लाह उन्हें उनके बीच याद करता है, जो उसके पास हैं।'

—मुस्लिम

कितनी आनन्द विभोर करने वाली और प्राण वर्धक है यह हदीस काश हम उस गिरोह में सम्मलित हो सकते।

अल्लाह से डरिए और उसी पर भरोसा कीजिए

अल्लाह जगत का स्वामी और शासक है। यहां जो कुछ होता उसी की आज्ञा और इच्छा से होता है। वही प्रत्येक को पैदा करता अ मौत देता है। वही हर चीज़ को पालता और ज़रूरतों को पूरा करता है ज़िन्दगी, मौत, लाभ, हानि, रोग, स्वास्थ्य, सम्मान, अपमान, दौलत, हु मत, औलाद, जीविका, भाग्य तात्पर्य यह कि दुनिया और आखिरत की चीज़ उसके और सिर्फ़ उसके हाथ में है। वही इस योग्य है कि हम उस ओर पलटें, उस पर भरोसा करें, उसे प्रसन्न करें, उसकी अवज्ञा से ब उसकी अप्रसन्नता और प्रकोप से डरें और उसके अलावा किसी से न क्योंकि किसी दूसरे के पास कोई ताक़त है ही नहीं, जिस से कोई भय या जिस पर भरोसा किया जा सके क़ुरआन मजीद में है :—

'जो अल्लाह चाहता है वही होता है। अल्लाह के बिना कोई ताक़त नहीं।' —क़हफ़, ३९

एक दूसरे स्थान पर है :-

'वही जीवन प्रदान करता है और वही मौत देता है।'

—मोमिनून, ८०

एक और जगह है :—

'कहो, ऐ अल्लाह! राज्य सत्ता के स्वामी तू जिसे चाहता है राज्य प्रदान करता है और जिस से चाहता राज्य छीन लेता है। जिसे चाहता है सम्मान प्रदान करता है और जिसे चाहता है अपमानित करदेता है। तेरे ही हाथ में भलाई है। निःसन्देह तू हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है।' —आले इम्रान, २६

अल्लाह को मानना यह अपेक्षा करता है कि ईमान वाला व्यक्ति अल्लाह से डरे, उसके अलावा किसी से न डरे :—

'तो तुम उन से न डरो, मुझ से डरो, अगर तुम (सच्चे) ईमान वाले हो।' —आले इम्रान, १७५

और अल्लाह पर और सिर्फ़ अल्लाह पर भरोसा करें :—

'ईमान वालों को अल्लाह ही पर भरोसा करना चाहिए।'

—आले इम्रान, १२२

सच्चे ईमान वालों के जीवन का चित्र क़ुरआन मजीद इस तरह पे करता।—

'ये वह हैं कि जब इनसे लोगों ने कहा, लोगों ने तुम्हारे मुक़ाबले के लिए दल एकत्र कर रखा है तो उनसे डरो, तो इस चीज़ ने उन का ईमान और बढ़ा दिया और उन्होंने कहा, अल्लाह हमारे लिए बस है और वह क्या ही अच्छा कार्य-साधक है।'

—आले इम्‌रान, १७३

यह है सच्चे मोमिन बन्दे की ज़िन्दगी का चित्र ! वह अल्लाह के वा किसी से नहीं डरता और अल्लाह से हर समय डरता है। वह ल्लाह के भरोसे ही पर परहेज़गारी की ज़िन्दगी गुज़ारता है, यहां तक इसी हालत में उसे मौत आ जाती है—

'ऐ ईमान वालो ! अल्लाह से डरो और उसका अवज्ञा से बचो जैसा कि उससे डरने और उसकी अवज्ञा से बचने का हक़ है और तुम्हें मौत आये तो बस इस हालत में कि तुम मुस्लिम (आज्ञाकारी) हो।'

—आले इम्‌रान, १०२

जो लोग अल्लाह से डर कर, उस की अवज्ञा से बचते हुए ज़िन्दगी ारते हैं और उस पर भरोसा करते हुए उस की राह पर चलते हैं, ल्लाह उनकी मदद करता है, अप्रत्यक्ष रूप से उनके लिए रास्ते खोलता और उनकी कठिनाइयों को एक-एक करके दूर कर देता है। क़ुरआन ीद में है :—

'जो कोई अल्लाह की अवज्ञा से बचेगा, अल्लाह उसके लिए रास्ता निकालेगा और उसे उस जगह से जीविका देगा, जहाँ से कि उसे गुमान भी न होगा और जो अल्लाह पर भरोसा करेगा, अल्लाह उसके लिए काफ़ी होगा। अल्लाह अपने इरादे को पूरा करके रहता है, उसने हर चीज़ का अन्दाज़ा ठहरा रखा है।'

—सूरः तलाक़, २-३

अबूज़र रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक र फ़रमाया, मैं क़ुरआन की एक आयत को जानता हूं जिसे अगर लोग नी ज़िन्दगी में अपना लें तो वह उनके लिए बिल्कुल काफ़ी हो जाए, र आप सल्ल० ने उक्त आयत पढ़ी। —अहमद, इब्ने माजा, दारमी

ल्लाह की प्रसन्नता के लिए उसका पूर्ण आज्ञापालन कीजिए

अल्लाह सम्पूर्ण सृष्टि का स्रष्टा है, उसी ने हमें पैदा किया है। लाह स्वामी है और हम सब पर उसी का अधिकार है, अल्लाह प्रभु है र हम सब उसी की प्रजा हैं, अल्लाह हमारा पूज्य है और हम सब उसके

उपासक और बन्दे हैं। ये हैं वे सम्बन्ध जो हमारे और हमारे अल्ला
बीच पाये जाते हैं। ये सम्बन्ध यह अपेक्षा करते हैं कि हम उसके कृतज्ञ
उसके आगे झुकें, उसकी प्रसन्नता के लिए जियें और मरें और पूरी जि
में उस के बन्दे और आज्ञाकारी बन कर रहें। क़ुरआन मजीद का आ
इन शब्दों से होता है :—

'सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो सारे संसार का रब है। अत्यन्त कृपाशील और दयावान है। उस दिन का मालिक है जिस दिन बदला दिया जाएगा, (ऐ अल्लाह !) हम तेरी ही बंदगी करते हैं और तुझ ही से मदद चाहते हैं।' —फ़ातिहा, १-४

यह मानव-प्रकृति की आवाज़ है जिसे उस प्रकृति के रचनाका
इन शब्दों में बांधा है। हम नमाज़ की प्रत्येक रक्अत में इस आवाज़
सुनते और लेते हैं। अल्लाह के कृतज्ञ होते और उस की बन्दगी त
आज्ञापालन करने की प्रतिज्ञा करते हैं और इस प्रतिज्ञा को पूरा करने
लिए उस से सहायता चाहते हैं।

सूरः बक़रः में इस चीज़ को इस प्रकार बयान किया गया है :–

'और लोगों में कुछ ऐसे हैं जो अल्लाह की ख़ुशी प्राप्त करने के लिए अपने आपको (अल्लाह के हाथ) बेच देते हैं और अल्लाह (ऐसे) बन्दों पर अत्यन्त करुणामय है। ऐ ईमान लाने वालो ! तुम पूरे के पूरे 'इस्लाम' में दाख़िल हो जाओ और शैतान के पद-चिन्हों का अनुसरण मत करो। निस्सन्देह वह तुम्हारा खुला हुआ दुश्मन है।' —सूरः बक़रः २०७-२०८

इन आयतों से विदित होता है कि अल्लाह उन बन्दों को अ
सच्चा बन्दा समझता है और उन पर बहुत ज्यादा दया करता है जो
की ख़ुशी को अपना अन्तिम लक्ष्य बनाते हैं और इस बड़े उद्देश्य को प्र
करने के लिए अपने पूरे अस्तित्व को, अपनी सारी योग्यताओं और शक्ति
को और अपने समस्त साधनों को अल्लाह के हाथ में दे देते हैं। अर्थात
के जीवन में और जो कुछ उनके पास होता है उस में उनकी अपनी इच
नहीं बल्कि अल्लाह की इच्छा और उसका आदेश चलता है। सूरः तौ
में है :—

'निस्सन्देह अल्लाह ने ईमान वालों से उनके प्राणों और उनके मालों को इसके बदले में ख़रीद लिया है कि उनके लिए जन्नत है।' —सूरः तौबा, १११

अल्लाह की प्रसन्नता और जन्नत एक ही हक़ीक़त के दो नाम

जन्नत उस स्थान, उस लोक और उस हालत को कहते हैं जहां और जब अल्लाह अपने बन्दों से सदैव के लिए प्रसन्न हो जायेगा और प्रसन्न होकर अपार, अक्षय और कल्पना शक्ति से बाहर के प्रसाद और सामीप्य प्रदान करेगा और वह अवसर लायेगा कि हमें उसके दर्शन मिल सकें।

सूरः बक़रः और सूरः तौबा की उक्त आयतों से स्पष्ट हुआ कि अल्लाह और मोमिन बन्दे के बीच एक वास्तविक मामला क्रय-विक्रय का भी होता है। बन्दा जब ईमान लाकर 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहता है और ख़ुद को अल्लाह की बन्दगी में दे देता है तो वह वास्तव में अपने जीवन को, अपनी योग्यताओं और शक्तियों को और अपनी सारी पूंजी को अल्लाह के हाथ बेच देता है। अब अगर बन्दा क्रिय-विक्रय के इस मामले पर क़ायम रहता है और अपने आप को वास्तविक रूप में अल्लाह की प्रसन्नता में खो देता है और अल्लाह के आदेशों के अधीन होकर जीवन व्यतीत करता है तो अल्लाह उसकी जीवन रूपी सम्पदा को स्वीकार कर लेता है और उसके मूल्य के रूप में जन्नत की अपार और सदैव रहने वाली नेमतें प्रदान करता है और अपने बन्दे से सदैव के लिए प्रसन्न हो जाता है।

ऊपर सूरः बक़रः की दो आयतों का उल्लेख किया गया है इनमें की आखिरी आयत इस हक़ीक़त को और अधिक स्पष्ट करती है, वह बताती है कि अल्लाह को मानने और अपने आप को उस के हाथ बेच देने का अर्थ इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कि मोमिन अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के साथ अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी ग़ुलामी में आ जाये। (इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल हो जाओ) और जीवन के प्रत्येक विभाग में, हर हालत और हर मामले में अल्लाह की इच्छा और उसके आदेशों और निर्देशों के अनुसार चले। यही नीति व्यक्तिगत रूप से हर मोमिन को अपनानी चाहिए और यही नीति सामूहिक रूप से तमाम ईमान वालों की होनी चाहिए। अल्लाह की अवज्ञा, चाहे वह पूरी ज़िन्दगी में हो या जीवन के किसी हिस्से में, ईमान के प्रतिकूल है और प्रत्यक्षतः शैतान का अनुसरण है और शैतान के पीछे चल कर मनुष्य अपनी दुनिया भी तबाह करता है और आख़िरत भी।

सूरः अनआम में अल्लाह ने इस हक़ीक़त को इन शब्दों में बयान किया है :—

'(ऐ नबी !) कहो, मेरी नमाज़, मेरी क़ुर्बानी, मेरा जना, मेरा मरना सब अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब है। उसका कोई शरीक नहीं। मुझे इसी का आदेश मिला है और सबसे पहले आत्म-समर्पण करने वाला मैं हूं।' —सूरः अनआम, १६२

जिस प्रकार नमाज़ और क़ुर्बानी आदि उपासनाएं केवल अल्लाह के लिए हैं और ये उपासनायें हमें उसी को प्रसन्न करने के लिए करने चाहिए, इसी प्रकार मानव-जीवन भी अल्लाह ही का है और वह भी उसी की इच्छा और उसी के आदेशानुसार व्यतीत होना चाहिए। मनुष्य का जीना हो या मरना, सब अल्लाह के लिए होना चाहिए। उक्त आयत का आखिरी हिस्सा बताता है कि अल्लाह का यही पूर्ण आज्ञापालन और बन्दगी, वास्तविक इस्लाम है और इसी अर्थ में इस्लाम ग्रहण करने की मांग अल्लाह ने अपने बन्दों से की है। क़ुरआन में एक और स्थान पर है:-

'(मेरी ओर से) कह दो, हे मेरे बन्दो जिन्होंने अपने साथ ज़्यादती की है, अल्लाह की दयालुता से निराश न हो। निस्सन्देह अल्लाह सब गुनाहों को क्षमा कर देगा। निस्सन्देह वह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है। और अपने रब की ओर पलटो और अपने को उसके हवाले कर दो, इस से पहले कि तुम पर यातना आ पहुंचे और फिर तुम्हें कहीं से मदद न मिले। तुम्हारे रब की ओर से जो सर्वोत्तम चीज़ तुम्हारी ओर उतारी गयी है उस पर चलो इस से पहले कि तुम पर अचानक यातना आ जाये और तुम्हें खबर भी न हो।' —सूरः ज़ुमर, ५३-५५

धन्य है, अल्लाह, सारे ससार का रब, अपने अनेकश्वरवादी (मुश्रिक) और अवज्ञाकारी बंदों को किस प्यार और मुहब्बत से बुला रहा है, हे मेरे बन्दो! निस्सन्देह तुम ने बड़े-बड़े अपराध किये हैं। निश्चय ही तुम अपने करतूतों के कारण इस योग्य हो चुके हो कि दुनिया और आखिरत में अल्लाह का अज़ाब तुम्हें घेर ले, लेकिन इस अज़ाब से तुम अब भी बच सकते हो। तुम्हारा रब क्षमाशील और दयावान है, वह सब गुनाहों को माफ़ करने के लिए तैयार है। आओ उस का दामन थाम लो। भक्ति और विनयपूर्वक उसके आगे झुक जाओ। शिर्क (अनेकश्वरवाद) विद्रोह और अवज्ञा से रुक जाओ। और उसके भेजे हुए सबसे उत्तम दीन (धर्म) पर चलो जो तुम्हारे दयावान प्रभु ने तुम्हारे कल्याण और भलाई ही के लिए भेजा है। अगर तुम ने अपने रब का कहना मान लिया तो वह तुम्हारे सारे गुनाहों को माफ़ कर देगा। तुम्हें अपनी रहमत में ले लेगा और जन्नत प्रदान करेगा। लेकिन अगर तुम विद्रोह और अवज्ञा पर अड़े रहे तो अल्लाह का अज़ाब दुनिया और आखिरत में तुम पर टूट पड़ेगा और तुम इस अज़ाब से बच न सकोगे।

इन आयतों से स्पष्ट हो गया कि अल्लाह के आज्ञापालन में अल्लाह

अपना कोई स्वार्थ नहीं है, बल्कि वह तो हमारी कामियाबी और ाई है जो इस पर निर्भर करती है, इसी प्रकार उसकी अवज्ञा करने से ।का कोई नुक़्सान नहीं होता, बल्कि उस से हमारी दुनिया और हमारी खिरत ही ख़राब होती है ।

जिस प्रकार अल्लाह की उपासना ज़रूरी है उसी प्रकार यह भी ़री है कि हम जिन्दगी में उसी की बन्दगी और उसके क़ानूनों का लन करें, क्योंकि स्वयं हमारा ईमान और हमारा एक अल्लाह को मानना ो बात की अपेक्षा करता है। अगर हम पूरे जीवन में अल्लाह की बंदगी र उसका आज्ञापालन नहीं करते तो हमें फिर स्वयं को सच्चा मोमिन ़ने का कोई हक़ नहीं रहता और न हम अपने आप को सही मायने में ़ ख़ुदा को मानने वाला कह सकते हैं, क्योंकि अल्लाह सारे जगत का ा करने वाला, स्वामी और पालनहार ही नहीं बल्कि वह शासक भी है:-

'सुनो! उसी का काम है पैदा करना और आदेश भी उसी का चल रहा है।' —सूरः आराफ़, ५४

यही अल्लाह, जो सारे संसार का अकेला शासक है, वही इंसानों का शासक है :—

'कहो, मैं पनाह लेता हूं इंसानों के रब की, इंसानों के बादशाह की, इंसानों के पूज्य की।' —सूरः नास, १-३

इंसानों के इसी हाकिम को इन्सानों के लिए आदेश देने और क़ानून ़ाने का अधिकार है :-

'आदेश (देने) का अधिकार केवल अल्लाह को है। (और किसी को नहीं)।' —सूरः यूसुफ़, ४०

अल्लाह के अलावा किसी को स्वतंत्र रूप से क़ानून बनाने का अधि- ़री समझना और मानना वास्तव में अल्लाह के साथ शिर्क करना ही है। ़आन में है :

'क्या इन के यहां (अल्लाह के) ऐसे शरीक हैं जिन्होंने उनके लिए ऐसा दीन बनाया जिसकी अनुमति अल्लाह ने उन्हें नहीं दी थी। —सूरः शूरा, २१

इंसान के लिए जायज़, सही और उचित क़ानून जिस का पालन ़नवार्य हो सिर्फ़ अल्लाह का है। उसके अतिरिक्त किसी के क़ानून को ़यज़ और सही क़ानून समझ कर उस पर चलना अल्लाह के साथ दूसरों शरीक बनाना है, क़ुरआन कहता है :-

'तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी तरफ़ जो कुछ उतारा गया है

उस पर चलो और उसके सिवा दूसरे संरक्षकों के पीछे न चलो।

—सूरः आराफ़, ३

इस आयत से विदित है कि अल्लाह को अपना रब मान लेने व खुला मतलब यह है कि मनुष्य अल्लाह के भेजे हुए क़ानून की पैरवी में ल जाये। अल्लाह के अलावा किसी और की बात या क़ानून को यह स्था देना, उसे खुदा और रब बनाने के बराबर ही है।

अल्लाह के क़ानून का पालन केवल इस दृष्टि ही से ज़रूरी नहीं कि वह जगत के और मानव के वास्तविक शासक का क़ानून है, बल्कि उ का पालन इसलिए भी आवश्यक है कि वह न्यायसंगत क़ानून है। यह उ खुदा का बनाया हुआ क़ानून है, जिस का ज़ुल्म से तनिक भी सम्पर्क न और न वह अपने बन्दों पर ज़ुल्म करने का कोई इरादा रखता है :—

'और अल्लाह संसार वालों पर ज़ुल्म करना नहीं चाहता।'

—सूरः आले इमरान, १०८

अल्लाह ने इन्सानों को पैदा किया है, वह सब को पाल रहा है, उ की रहमत सब के लिए है, उस की दृष्टि में सब बराबर हैं, उसी से आश की जा सकती है कि वह सब के साथ न्याय करेगा और किसी पर अन्या न होने देगा। उसने अपना दीन इसी लिए भेजा है कि इन्सान इन्सानों बनाये हुए अज्ञानपूर्ण अन्याय पर आधारित और असन्तुलित क़ानूनों बच सके और खुदा के भेजे हुए बुद्धिसंगत, सन्तुलित और न्याय पर आध रित क़ानून के द्वारा मानवता के सभी वर्गों, समुदायों, जातियों और दल को न्याय मिल सके :—

'निस्सन्देह हम ने अपने रसूल खुली दलीलों के साथ भेजे और उनके साथ किताब यानी (हक़ और इन्साफ़) तुला उतारी, ताकि लोग इन्साफ़ पर क़ायम हों।' —सूरः हदीद, २५

बात इतनी ही नहीं कि खुदा का भेजा हुआ क़ानून और जीवन व्यवस्था केवल न्यायसंगत और सन्तुलित व्यवस्था है, बल्कि यह भी सत है कि वही दुनिया और आखिरत दोनों में सफलता और कल्याण की ज़म नत देती है। ऐसा क़ानून और ऐसी जीवन-व्यवस्था अल्लाह ही दे सकत था और अल्लाह ने हमें ऐसा ही दीन दिया है :—

'ये लोग (ईमान वाले) अपने रब की ओर से हिदायत पर हैं और यही लोग (दुनिया और आखिरत में) सफल हैं।'

—सूरः बक़रः, ५

अल्लाह ने जब मानव-जाति को ज़मीन पर बसाया तो उसे यह बा

अच्छी तरह बता दी थी कि मनुष्यों की मुक्ति और उनकी सफलता केवल इस पर निर्भर करती है कि वे अल्लाह का आज्ञापालन करें और उसके दीन की पैरवी करें। जो दीन उसके रसूलों द्वारा उन तक पहुंचता रहेगा अगर वे उस दीन और उस क़ानून से विमुख होंगे तो अल्लाह की अनन्त यातनाओं का शिकार होंगे :–

'हे आदम की सन्तान ! अगर तुम्हारे पास तुम्हीं में से रसूल आये जो तुम्हें मेरी आयतें सुनाये तो जो कोई (खुदा की) अवज्ञा से बचेंगे और (अपना) सुधार कर लेंगे तो ऐसे लोगों को न कोई भय होगा और न वे दुखी होंगे। और जो लोग हमारी आयतों को झुठलायेगें और उनके मुक़ाबले में अकड़ेगें ऐसे लोग आग (में पड़ने) वाले हैं जहां वे सदा रहेंगे।' –सूरः आराफ़, ३५-३६

अल्लाह के रसूल अल्लाह का दीन (धर्म) और उसका क़ानून लेकर विभिन्न जातियों और देशों में आते रहे :–

'और कोई गिरोह ऐसा नहीं जिस में कोई सचेत करने वाला न गुज़रा हो।' –सूरः फ़ातिर २४

सब से आखिर में हज़रत मुहम्मद सल्ल० सब इन्सानों के पथ प्रदर्शक और गुरु बन कर आये :–

('ऐ मुहम्मद !) हमने तुम्हें सब इंसानों के लिए खुशखबरी देने वाला और डराने वाला बना कर भेजा है।' –सूरः सबा, २८

मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के आखिरी नबी और रसूल हैं उनके बाद कोई नबी न आयेगा–

'आप (सल्ल०) अल्लाह के रसूल और आखिरी नबी हैं।'
—सूरः अहज़ाब, ४०

आप सल्ल० के आख़िरी नबी के रूप में आ जाने के बाद अल्लाह की बन्दगी और कृतज्ञता प्रकाशन का एक ही रास्ता है और वह यह कि ज़िन्दगी के सभी मामलों में अल्लाह के आखिरी नबी का पूर्ण रूप से अनुसरण किया जाए–

'(हे नबी !) कहो अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत रखते हो तो मेरा अनुसरण करो, अल्लाह तुम से मुहब्बत करने लगेगा और तुम्हारे गुनाहोंको माफ़ कर देगा। अल्लाह माफ़ करने वाला और दयावान है। —सूरः आले इमरान, ३१

जो व्यक्ति अल्लाह और उसके रसूल के आज्ञापालन के लिए तैयार नहीं कुरआन उसे मुसलमान स्वीकार नहीं करता–

'और ये लोग कहते हैं कि हमने अल्लाह और रसूल को मान लिया और हमने आज्ञापालन स्वीकार कर लिया फिर उनमें का एक गिरोह इस के बाद (आज्ञापालन) से मुंह मोड़ता है, ऐसे लोग मोमिन नहीं हैं।'

—सूरः नूर, ४७

'ला इलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' इस्लाम का बुनियादी कलिमा है। इसका पहला अंश यह बताता है कि अल्लाह के अलावा कोई पूजने के लायक़ नहीं। इन्सान केवल अल्लाह का बन्दा है और उसे पूरी ज़िंदगी में उसी की बन्दगी और ग़ुलामी करनी है। कलिमे के दूसरे अंश से मालूम होता है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं और अल्लाह की बंदगी और ग़ुलामी का एक ही रास्ता है और वह यह कि ज़िन्दगी के सारे मामलों में उनकी और उनके लाए हुए दीन की पैरवी की जाए। यही दुनिया और आख़िरत में सफलता की राह है और इसी राह पर चलकर हम अल्लाह की प्रसन्नता, उसकी कृपा, उसकी मदद और उसका सामीप्य प्राप्त कर सकते हैं।

*

बन्दों के हक और अधिकार

धर्म की परिभाषा आम तौर से यह की जाती है कि वह खुदा और बन्दों के बीच एक प्राइवेट मामला है। यह परिभाषा दूसरे धर्मों के बारे में भले ही सही हो, पर इस्लाम के बारे में सही नहीं है। इस्लाम का सम्बन्ध इन्सान की प्राइवेट और पब्लिक, व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों ज़िन्दगियों से है। इस्लाम जिस प्रकार खुदा से बन्दे के सही सम्बन्ध का नाम है इसी प्रकार वह बन्दे के दूसरे बन्दों से सही सम्बन्ध का भी नाम है। इस्लाम के बहुत आसानी से दो हिस्से किए जा सकते हैं। एक का सम्बन्ध अल्लाह के हक़ और अधिकारों से है और दूसरे का मनुष्यों के हक़ और अधिकारों से। इस्लाम उक्त दोनों हिस्सों को महत्व देता है। क़ुरआन मजीद में जहां भी इस्लाम की मौलिक शिक्षायें बयान की गई हैं वहां अल्लाह के हक़ के तुरन्त बाद मनुष्यों के हक़ का उल्लेख है—

> 'अल्लाह की बन्दगी करो, उसके साथ किसी को शरीक मत करो। मां-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो और सम्बन्धियों, यतीमों, ग़रीबों, रिश्तेदार पड़ोसी, अजनबी पड़ोसियों, पास के व्यक्ति के साथ, मुसाफ़िरों और ग़ुलामों के साथ अच्छा बर्ताव करो।'
> —निसा, ३६

देखा आपने ! अल्लाह तआला ने केवल अपनी बन्दगी का आदेश देने के तुरन्त पश्चात मनुष्यों से सद्व्यवहार का आदेश दिया, यही नहीं विस्तार से उनकी सूची पेश की। इस सूची में मां-बाप, रिश्तेदार, अनाथ, ग़रीब, पड़ोसी, साथी, मुसाफ़िर और ग़ुलाम सब ही सम्मिलित हैं। इससे पता चलता है कि सत्य धर्म दो चीज़ों का नाम है। (१) अल्लाह की बन्दगी इस प्रकार कि उसके साथ किसी को शरीक न किया जाय, (२) मानव से सद्व्यवहार, क़ुरआन मजीद में एक दूसरे स्थान पर दीन की

बुनियादी बातें बताते हुए ईमान के तुरन्त बाद बंदों का उल्लेख किया गया है—

'नेकी और वफ़ादारी तो यह है कि इंसान अल्लाह पर, आखिरत पर, फ़रिश्तों पर (अल्लाह की) किताब पर और नबियों पर ईमान लाए, माल को उसकी मुहब्बत के होते हुए भी रिश्तेदारों, यतीमों, ग़रीबों, मुसाफ़िरों और मांगनें वालों को दे और ग़ुलामों (की रिहाई) में खर्च करे, नमाज़ अदा करे, ज़कात दे, ज़ब वचन दे तो उसे निभानें वाला हो। तंगी, मुसीबत और युद्ध के समय धैर्य से काम ले। ऐसे ही लोग (ईमान में) सच्चे हैं और वही (अल्लाह से) डरनें वाले हैं।' —बक़र: १७७

यहां नमाज़ और दूसरे भले कामों से पहले मनुष्यों की सेवा का वर्णन किया गया है। इससे पता चलता है कि बन्दों के हक़ का असाधारण महत्व है। क़ुरआन की एक और सूर: में इंसानों की सेवा और उनसे सद-व्यवहार का वर्णन ईमान से भी पहले किया गया है—

'आखिर इंसान घाटी में क्यों दाखिल नहीं हुआ ? और तुम्हें क्या मालूम कि घाटी क्या है ? ग़ुलाम को आज़ाद करना या भूख के दिन रिश्तेदार यतीम या मिट्टी में पड़े (दुर्दशाग्रस्त) ग़रीब को खाना खिलाना, फिर यह व्यक्ति (जिसने ये काम किए) इन लोगों में हो जो ईमान लाए और जिन्होंने सब्र और दया करने की एक दूसरे को ताकीद की, ऐसे लोग दाईं ओर वाले (सफल) हैं। —बलद, ११-१८

इन आयतों से विदित होता है कि मनुष्यों की सेवा करना असाधारण और अति उत्तम नेकी है और यह दूसरी बहुत सी बड़ी नेकियों को जन्म देती है। जिन लोगों में यह नेकी पाई जाती है वे ईमान और सब्र जैसी महान नेकियों को भी प्राप्त कर लेते हैं। जो दिल मानव के लिए पसीजता है और उन पर तरस खाता है, वह स्वस्थ दिल है जो अल्लाह के आगे झुकने और सत्य को ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाएगा। इसके विपरीत जिसका दिल पत्थर का है जो मनुष्यों को मुसीबतों और परेशानियों में ग्रस्त देखता है और उसका दिल उनके लिए नहीं पसीजता, ऐसा व्यक्ति इन्सान नहीं जानवर है। उसके सीने में दिल नहीं पत्थर है। ऐसे दिल में ईमान नहीं समा सकता, वह दुनिया का उपासक है और दुनिया का उपासक अल्लाह का उपासक नहीं बन सकता है।

इन आयतों से यह भी मालूम होता है कि जो लोग अल्लाह और
ों दोनों का हक़ अदा करते हैं, वे आख़िरत में अल्लाह का सामीप्य
। करेंगे। ये अल्लाह के कृतज्ञ सेवक हैं। उन्होंने अल्लाह की प्रदान की
नेमतों में अल्लाह और उसके बंदों दोनों का हक़ पहचाना और उसकी
नता के लिए उसकी दी हुई नेमतों को उसके बन्दों पर खूब-खूब व्यय
ा। ऐसे लोग नरक की यातनाओं से बचा लिए जाएंगे और उनसे उन
मालिक और ख़ुदा सदैव के लिए प्रसन्न हो जाएगा।

क़ुरआन मजीद में है—

'और नरक से बचा लिया जाएगा उस व्यक्ति को जो अल्लाह की अवज्ञा से ख़ूब बचता रहा हो। जो अपना माल (बन्दों को) देता हो ताकि अपने (आत्म) को निखारे, उस पर किसी का ऐहसान नहीं है जिसका वह बदला दे रहा हो। वह तो अपने सर्वोच्च रब की ख़ुशी प्राप्त करना चाहता है और वह जल्द ही राज़ी हो जाएगा।' —लैल १७-२१

यह अल्लाह के प्यारे बन्दों का चरित्र है। इसके विपरीत उन लोगों
चरित्र है जो अल्लाह को ना पसन्द हैं और जो आख़िरत में सख़्त
ाब से दो चार होंगे। उनके चरित्र के विशेष पहलू दो हैं, अल्लाह पर
न न लाना और बन्दों पर दया न करना। क़ुरआन मजीद में है—

'इसे पकड़ लो और इसे जकड़ लो फिर जहन्नम में इसे डाल दो, फिर इसे सत्तर गज़ की ज़ंजीर में बांध दो। यह महिमाशाली अल्लाह पर ईमान नहीं रखता था और ग़रीबों को खाना खिलाने पर लोगों को उभारता न था।' —हाक़्क़ः, ३०-३४

नरक वासियों से पूछा जाएगा कि वे किन अपराधों के कारण नरक
दुख भरी दुनिया में पहुंचे ? वे जवाब देंगे :

'वे कहेंगे हम नमाज़ी नहीं थे, हम गरीबों को खाना नहीं खिलाते थे। हम मज़ाक़ उड़ाने वालों के साथ हो कर (हक़ का) मज़ाक़ उड़ाते थे और हम बदले के दिन का इन्कार करते थे।'

—मुद्दस्सिर, ४२-४६

बन्दों के हक़ अदा करना दीन की बुनियादी बात है। इससे वही व्यक्ति
ह मोड़ सकता है जो ख़ुदा को भुला बैठा हो और उसके दिल से आख़िरत
हिसाब-किताब की धारणा निकल चुकी हो—

'क्या तुमने उस व्यक्ति को देखा जो कर्मों का बदला दिया जाने को झुठलाता है ? यही तो वह आदमी है जो यतीम को धक्के देता

है और ग़रीब को खाना खिलाने पर (लोगों को) नहीं उभारता।'

—माऊन, १-३

बन्दों के अधिकारों का एक और दृष्टि से भी बड़ा महत्व है। शिर्क को छोड़कर, क्योंकि वह अक्षम अपराध है, दूसरी कोताहियों और अपराधों को जो अल्लाह के हक़ अदा न करने के सिलसिले में आदमी से हुए होंगे अल्लाह चाहेगा तो माफ़ कर देगा–

'अल्लाह इस अपराध को माफ़ नहीं करेगा कि उसके साथ किसी को शरीक किया जाय और इससे नीचे के गुनाह को जिसके लिए चाहेगा माफ़ कर देगा।'

—निसा, ११६

किन्तु वह इस बात को माफ़ नहीं करेगा कि बंदों के हक़ मारे जाएं, जब तक कि बंदे जिनका हक़ मारा गया है स्वयं माफ़ न कर दें या उनके हक़ अदा कर दिए जाएं। हदीस में है :–

'कर्म पत्रों में तीन प्रकार के बुरे काम लिखे होंगे, एक वह जिसे अल्लाह क्षमा नहीं करेगा अर्थात अल्लाह के साथ शिर्क (क्योंकि) महिमाशाली अल्लाह ने फ़रमाया, अल्लाह इस बात को क्षमा नहीं करेगा कि उस के साथ किसी को शरीक किया जाए। दूसरे प्रकार के काम वे होंगे जिन पर हिसाब लिए बग़ैर अल्लाह नहीं छोड़ेगा। ये बन्दों का एक दूसरे पर अत्याचार है, जब तक कि वे (आखिरत में) एक दूसरे से (अपने हक़) का बदला न चुका लें। तीसरी तरह के काम वे हैं जिनकी अल्लाह ज्यादा परवाह न करेगा, यह बन्दों की वह जुल्म और ज़्यादती है जो उस मामले में उन्होंने की होगी जो उनके और ख़ुदा के बीच पाया जाता है। यह अल्लाह के अधिकार में है चाहेगा तो अज़ाब देगा और चाहेगा तो क्षमा कर देगा।'

—शोबुलईमान, बैहक़ी

आखिरत में रुपया-पैसा और जायदाद वग़ैरह सामान न होगा कि उनको देकर किसी के मारे हुए हक़ की क्षति पूर्ति की जा सके बल्कि वहां तो नेकियाँ होंगी और नेकियों ही के रूप में क़ीमत दी जाएगी। इसीलिए हक़ मारने के बदले में ज़ालिमों की नेकियां उन लोगों को दे दी जाएंगी जिन का हक़ मारकर उन्होंने उन पर जुल्म किया होगा और अगर ज़ालिमों की नेकियां ख़त्म हो जाएंगी और उन पर लोगों के हक़ अभी बाक़ी होंगे तो फिर उन लोगों की बुराइयां जिन पर जुल्म हुआ है, ज़ालिम के हिसाब में डाल दी जाएंगी और उसे नरक में डाल दिया जाएगा। हदीस में है–

'जिस किसी ने अपने भाई पर उसकी इज़्ज़त के सम्बन्ध में कोई अत्याचार किया हो या उसकी कोई और चीज़ उसके पास हो तो उसे चाहिए कि उससे (माफ़ी मांगकर) उसे अपने लिए वैध कर ले, उस दिन के आने से पहले जबकि न दीनार होगा और न दिरहम। अगर ज़ालिम के पास नेकियां होंगी तो हक़ मारने के बराबर उससे लेकर उसको दे दी जायेंगी जिसका हक़ मारा गया है और अगर उसके पास नेकियां न होंगी तो जिसका हक़ मारा गया है उसकी बुराइयां ज़ालिम पर डाल दी जायेंगी।'

—बुख़ारी

सही मुस्लिम की एक रिवायत इस सच्चाई पर और अधिक प्रकाश डालती है :—

'अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया तुम जानते हो निर्धन कौन है? सहाबा रज़ि० ने कहा, निर्धन हममें वह व्यक्ति है जिसके पास न पैसा हो, न सामान। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया, मेरी उम्मत में निर्धन वह व्यक्ति है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़े और ज़कात जैसे भले कामों के साथ आएगा, मगर उसने किसी को गाली दी होगी, किसी पर तोहमत लगाई होगी, किसी का माल हड़प किया होगा किसी का ख़ून बहाया होगा और किसी को मारा-पीटा होगा, तो हर व्यक्ति को उसकी नेकियां दे दी जाएंगी फिर अगर उनका हिसाब चुकता होने से पहले नेकियाँ ख़त्म हो जाएंगी, तो इस पर उनकी बुराइयां डाल दी जाएंगी फिर उसे नरक में ढकेल दिया जाएगा।'

कितनी शिक्षाप्रद और हिला देने वाली हैं ये हदीसें। इनसे बन्दों के हक़ का महत्व अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है और बन्दों के हक़ मारने की संगीनी पर पूरी तरह रोशनी पड़ती है।

न्याय

बन्दों के हक़ के सम्बन्ध में अल्लाह के ये संक्षिप्त शब्द सारगर्भित निर्देश की हैसियत रखते हैं—

'निस्संदेह अल्लाह न्याय का, सद्व्यवहार का और रिश्तेदारों को देने का आदेश देता है।' —नह्ल, ९०

प्रत्येक व्यक्ति मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम, दोस्त हो या दुश्मन न्याय पाने का अधिकारी है। दुश्मनी में भी किसी व्यक्ति या गिरोह पर अन्याय करना ठीक नहीं—

'और ऐसा न हो कि किसी गिरोह की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम न्याय करना छोड़ दो। न्याय करो यही तक़्वा (धर्म-परायणता) से लगती हुई बात है।' —माइदः, ८

हर इन्सान की जान आदर पाने योग्य है। अकारण और नाहक़ किसी का भी ख़ून नहीं बहाया जा सकता। यही हैसियत इन्सान के माल की भी है, उसे उससे छीना नहीं जा सकता। हर इन्सान की प्रतिष्ठा बनी रहे यह उसका हक़ है, किसी हाल में भी उस पर हाथ नहीं डाला जा सकता। हर मनुष्य को अपनी धारणा के अनुसार इबादत करने का अधिकार है, किसी को धर्म परिवर्तन करने पर मजबूर नहीं किया जा सकता। किसी के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता, किसी के पूजा स्थलों का अपमान नहीं किया जा सकता, किसी के धार्मिक गुरुओं और महात्माओं को बुरा भला नहीं कहा जा सकता, किसी के 'पर्सनल ला' को समाप्त नहीं किया जा सकता। इज़्ज़त के साथ ज़िन्दा रहने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार प्राप्त है, इस अधिकार से किसी को वंचित नहीं किया जा सकता। उचित तरीक़ों से रोज़ी कमाने का प्रत्येक को अधिकार है, किसी का यह अधिकार छीना नहीं जा सकता। शिक्षा प्राप्त करना और अपने धर्म के अनुसार अपनी औलाद को शिक्षा दिलाना हर आदमी का अधिकार है किसी का यह अधिकार समाप्त नहीं किया जा सकता। औरत हर हाल में आबरू और इज़्ज़त की अधिकारी है उसकी इज़्ज़त को किसी हाल में भंग नहीं किया जा सकता। क़ानून प्रत्येक की सुरक्षा के लिए है, इस सम्बन्ध में कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता। तात्पर्य यह कि इस प्रकार के मानव-अधिकार अमीर-ग़रीब, काले-गोरे, मुस्लिम, ग़ैर-मुस्लिम, दोस्त-दुश्मन सबके लिए हैं और इस्लाम की मौलिक शिक्षा केवल यही नहीं है कि सबके साथ न्याय हो बल्कि न्याय की रक्षा और उसकी स्थापना मुसलमान के जीवन का मूल उद्देश्य बताया गया है—

'हे ईमान लाने वालो! न्याय को स्थापित करने वाले बनो और अल्लाह के लिए (इन्साफ़ की) गवाही देने वाले बनो चाहे गवाही स्वयं तुम्हारे या तुम्हारे माता-पिता या रिश्तेदारों के विरुद्ध हो। जिसके विरुद्ध गवाही दी जा रही है चाहे वह धनवान या निर्धन हो तो अल्लाह उसका अधिक भला चाहने वाला है तो तुम इच्छाओं के पालन में न्याय से न हटो।' —निसा, १३५

ज़ालिम को चाहे कुछ ढील मिल जाए लेकिन उसका परिणाम बड़ा
ाक होता है। प्यारे नबी सल्ल० की एक हदीस अबू मूसा रज़ि० से
ायत की गई है कि–

'प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया, अल्लाह ज़ालिम को ढील देता
है मगर जब पकड़ता है तो फिर छोड़ता नहीं। फिर आप सल्ल० ने
क़ुरआन की यह आयत पढ़ी 'और इसी प्रकार तुम्हारे रब की
पकड़ होती है जब वह ज़ालिम बस्तियों को पकड़ता है, निस्सन्देह
उसकी पकड़ सख़्त और दर्दनाक है।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अल्लाह के अप्रिय और अवज्ञाकारी बंदे आख़िरत में नूर से वंचित
वे अन्धेरों में भटकते-भटकते नरक में जा गिरेंगे। प्रत्येक बुराई जो
न दुनिया में करेगा वह आख़िरत में अन्धेरे का रूप धारण कर लेगी
ज़ुल्म बहुत से अन्धेरों का रूप धारण करेगा। एक हदीस है कि
ाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया–

'ज़ुल्म क़ियामत के दिन अन्धेरों का रूप धारण करेगा।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

इससे न्याय का महत्व और ज़ुल्म की बुराई अच्छी तरह स्पष्ट
ाती है। यह बात भी जान लेना ज़रूरी है कि न्याय करने के लिए
ार्त बिल्कुल नहीं है कि लोग हमारे साथ न्याय करें, तब ही हम
याय करें। लोग न्याय करें या अन्याय हमें हर हालत में न्याय करना
अन्याय से बचना चाहिए। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है–

'लोगों के पीछे चलने वाले न बनो कि यों कहने लगो, अगर
ोग सद्व्यवहार करेंगे तो हम भी करेंगे और अगर वे ज़ुल्म करेंगे
ो हम भी करेंगे। नहीं, अपने आपको इस बात के लिए तैयार
करो कि अगर लोग अच्छा व्यवहार करें तो तुम अच्छा व्यवहार
करो और वे दुर्व्यवहार करें तो तुम अन्याय न करो।' –तिर्मिज़ी

यवहार

इस्लाम ने केवल न्याय करने ही का आदेश नहीं दिया है, बल्कि
आगे बढ़कर मनुष्यों के साथ सद्व्यवहार का आदेश दिया है। यह
ा भी सब इंसानों के लिए है। इसमें मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम के
कोई अंतर नहीं। हमारे दिल में हर इंसान के लिए दया होनी
ए। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है :–

'दया करने वालों पर वह 'दयावान' (अल्लाह) दया करेगा। धरती वालों पर दया करो आसमान वाला तुम पर दया करेगा।'
—तिर्मिज़ी, अबूदाऊद

हर इंसान आदम की संतान होने के कारण हमारा भाई है। भाई के साथ हमारा जो व्यवहार होना चाहिए वही व्यवहार हमें इं से करना चाहिए। हम उस पर दया करें, दिल से उसका भला चाहें, अच्छी से अच्छी सलाह दें कठिनाइयों में उसकी सहायता करें। जरूरत उसके काम आएं उससे सज्जनता का व्यवहार करें और उसकी जो हम कर सकते हों तो उससे पीछे न हटें।

निस्सहाय व्यक्तियों की सेवा

जो व्यक्ति जितना अधिक बेसहारा, कमज़ोर ग़रीब और परेशा उतना ही वह हमारी हमदर्दी, ध्यान और सहायता के योग्य है। हम कर्तव्य है कि हम उसे सहारा दें। हदीस में है—

'अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, विधवाओं और ग़रीबों के लिए भाग दौड़ करने वाला अल्लाह की राह में भाग दौड़ करने वाले की तरह है और मेरा ख्याल है, आप सल्ल० ने यह भी कहा, वह रात को जागकर इबा-दत करने वाले की तरह है जो कभी नहीं थकता और उस व्यक्ति की तरह है जो हमेशा रोज़े से रहता है।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अल्लाहु अक्बर! ग़रीबों और विधवाओं की सेवा करने का कित बड़ा बदला है। यतीम के बारे में प्यारे नबी सल्ल० नें फ़रमाया—

'जो व्यक्ति अपने और किसी दूसरे व्यक्ति के यतीम के खाने-पीने आदि की व्यवस्था करेगा वह स्वर्ग में मेरे साथ इस प्रकार रहेगा। (आप सल्ल० नें) अपने अंगूठे के पास की उंगली और बीच की उंगली से संकेत किया और इन दोनों के बीच थोड़ा सा फ़ासला रखा।' —बुख़ारी

यतीम का पालन पोषण करने वाले का स्थान कितना ऊंचा है इसके विपरीत यतीम का माल हड़प करने वालों का परिणाम बड़ा ही द नाक है। क़ुरआन मजीद में है :—

'जो लोग यतीमों का माल ज़ुल्म से खाते हैं वे अपने पेट में आग

खाते हैं और वे नरक की भड़कती हुई अग्नि में जायेंगे।'

—निसा, १०

यह बात फिर याद कर लीजिए कि ये निर्देश मुसलमानों और ग़ैर स्लमों दोनों के बारे में हैं।

ड़ोसी का हक़

जो लोग हमारे पड़ोस में रहते हैं—चाहे वे मुसलमान हों या ग़ैर-स्लम—वे हमारी सहानुभूति और सद्व्यवहार के दूसरों की अपेक्षा धक अधिकारी हैं। क़ुरआन मजीद में पड़ोसियों के साथ सद्व्यवहार आदेश दिया गया है। रिश्तेदार पड़ोसी के साथ भी और उस पड़ोसी साथ भी जिससे कोई रिश्तेदारी नहीं है और हदीसों से भी मालूम ता है कि पड़ोसी के हम पर असाधारण हक़ और अधिकार हैं। प्यारे ी सल्ल० फ़रमाते हैं:—

'जिब्रील मुझ से पड़ोसी के बारे में बराबर ताकीद करते रहे, यहाँ तक कि मुझे ख़याल होने लगा कि वे उसे (सम्पत्ति का) वारिस बना देंगे।'

—बुखारी-मुस्लिम

एक दूसरी हदीस में है—

'अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, अल्लाह की क़सम! वह मोमिन नहीं, अल्लाह की क़सम! वह मोमिन नहीं, अल्लाह की क़सम! वह मोमिन नहीं। पूछा गया कौन! (मोमिन नहीं है?) ऐ अल्लाह के रसूल! प्यारे नबी सल्ल० ने उत्तर दिया, जिसका पड़ोसी उसके उत्पात से बचा हुआ न हो।'

—बुखारी, मुस्लिम

ाँ-बाप के हक़

इंसानों में, इंसान पर सबसे ज़्यादा हक़ उसके मां-बाप का है। रआन और हदीस में मां-बाप के साथ सद्व्यवहार की बार-बार ताकीद गई है। क़ुरआन में है:—

'और तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया कि उसके सिवाए किसी की बंदगी न करो और माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करो। यदि उनमें से कोई एक या दोनों तुम्हारे सामने बुढ़ापे को पहुंच जाए तो उन्हें नागवार बात न कहो और न उन्हें झिड़को बल्कि उनसे भली बात कहो और दयालुता के साथ उनके लिए विनम्रता की भुजा झुका दो और कहो ऐ मेरे रब। जिस तरह इन्होंने

बचपन में मेरा पालन-पोषण किया है, तू भी इन पर दया कर।'

—बनी इस्राईल, २३-२४

मां का हक़ बाप से भी ज्यादा है, हदीस में है :—

'अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि एक व्यक्ति ने पूछा, हे अल्लाह के रसूल ! मेरे सद्व्यवहार का सबसे अधिक अधिकारी कौन है ? उन्होंने उत्तर दिया, तुम्हारी मां ! उस ने पूछा, फिर कौन ? उत्तर दिया, तुम्हारी मां ! पूछा, फिर कौन ? जवाब दिया तुम्हारी मां। उसने पूछा, फिर कौन ? प्यारे नबी ने फ़रमाया तुम्हारा बाप। फिर जो (रिश्ते में) ज्यादा क़रीब हो, फिर जो ज्यादा क़रीब हो।'

—बुखारी, मुस्लिम

अगर मां-बाप शिर्क या अल्लाह की अवज्ञा पर ज़ोर दें तो उन बात नहीं मानी जायेगी, किन्तु इस स्थिति में भी उन से अच्छा व्यवह बराबर किया जाता रहेगा। क़ुरआन मजीद में है :—

'अगर वे (मां-बाप) इस बात की कोशिश करें कि तुम मेरे साथ उन चीज़ों को सहभागी ठहराओ जिन (के सहभागी होने) का तुम्हें ज्ञान नहीं है तो उनकी बात मत मानना, परन्तु दुनिया में उनसे भले तरीक़े से पेश आना और चलना उस व्यक्ति के रास्ते पर जो मेरी ओर झुका हुआ है।'

—सूरः लुक़मान, १५

रिश्तेदारों के हक़

मां-बाप के बाद हम पर रिश्तेदारों का हक़ होता है। क़ुरआ मजीद में जहां बन्दों के हक़ और अधिकारों का उल्लेख किया गया है वह सब से पहले मां-बाप के हक़ बयान हुए हैं उसके बाद ही रिश्तेदारों के ह का उल्लेख किया गया है—

'नेकी यह है कि माल की मुहब्बत के बावजूद खर्च करे रिश्ते-दारों पर, यतीमों, ग़रीबों, मुसाफ़िरों और मांगने वालों पर और ग़ुलामों को आज़ाद कराने के लिए।'

—सूरः बक़रः—१७७

सूरः निसा में दीन की दो महत्वपूर्ण बुनियादें बताई गयी हैं १. अल्लाह का भय, २. रिश्ते-नाते का ख्याल :—

'और अल्लाह की अवज्ञा से बचो जिसका वास्ता देकर तुम एक दूसरे से अपना हक़ माँगते हो और रिश्तों का ख्याल रखो।'

—सूरः निसा, १

अल्लाह के सच्चे बन्दे अल्लाह से किये हुए वायदे को पूरा करते हैं ौर रिश्तेदारी का हक़ अदा करते हैं :–

'जो अल्लाह से किए हुए वायदे को पूरा करते हैं और (बन्दगी की) प्रतिज्ञा को भंग नहीं करते, जो उन रिश्तों को जिन्हें जोड़ने का अल्लाह ने आदेश दिया है, जोड़े रखते हैं, जो अपने रब से डरते और हिसाब के बुरे परिणाम से डरते रहते हैं।'

—सूरः रअद, २०-२१

इन्सानी रिश्तों को जोड़ने वालों से अल्लाह रिश्ता जोड़ेगा और न रिश्तों को काटने वालों से अल्लाह अपना रिश्ता तोड़ लेगा। प्यारे बी सल्ल० फ़रमाते हैं :–

'रिश्ता-नाता (खूनी रिश्ता) 'उस दयावान' की (कृपा) ही की एक शाखा है। अल्लाह ने कहा है जो रिश्ते जोड़ेगा मैं उससे रिश्ता अपना जोड़े रखूंगा, जो उस रिश्ते को काट देगा मैं भी उस से रिश्ता काट लूंगा।' —बुख़ारी

और जिस से अल्लाह सम्बन्ध तोड़ ले वह स्वर्ग नहीं पा सकता। दीस में है :–

'(रिश्तों को) तोड़ने वाला स्वर्ग में नहीं जायेगा।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

रिश्तेदारों के हक़ अदा करने से मनुष्य की उम्र और रोज़ी दोनों ं बरकत होती है। बुख़ारी और मुस्लिम की एक हदीस में है :—

'जो व्यक्ति चाहता हो कि उसकी रोज़ी बढ़े और उसकी उम्र लम्बी हो, उसे चाहिए कि रिश्तों को जोड़े (रिश्तेदारों के हक़ अदा करे)। —बुख़ारी, मुस्लिम

रिश्ता जोड़ना इसे नहीं कहते कि हम दूसरों के सद्व्यवहार के बदले में सद्व्यवहार करें, इसे तो बदला कहते हैं। रिश्ता जोड़ना तो यह है कि रिश्तेदार हमारे हक़ अदा करें या न करें, हम हर हाल में उनके हक़ अदा करें और उन के साथ अच्छा व्यवहार करें। प्यारे नबी सल्ल० का कहना है :—

'रिश्ते जोड़ने वाला वह नहीं है जो बदले में रिश्ता जोड़े। रिश्ता जोड़ने वाला वास्तव में वह है कि जब उस से रिश्ता तोड़ लिया जाये तो वह रिश्ते का हक़ अदा करे।' —बुख़ारी

रिश्ते का हक़ अदा करने का यह आदेश मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लि
दोनों के बारे में है।

पति-पत्नी के हक़

पति-पत्नी का सम्बन्ध बहुत महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध क
सुदृढ़ता और अच्छाई ही पर दोनों की शान्ति, दोनों की सफलता औ
सन्तान की शिक्षा-दीक्षा और उनका भविष्य बड़ी हद तक निर्भर करत
हैं। घर के प्रबंध को ठीक तरह चलाने के लिए अल्लाह ने मर्द को ज़िम्मे
दार बनाया है और औरत को निर्देश दिया है कि वह जायज़ कामों म
पति का कहना माने। क़ुरआन मजीद में है :—

'मर्द औरतों के ज़िम्मेदार हैं, इसलिए कि अल्लाह ने एक को
दूसरे पर बड़ाई प्रदान की है और इसलिए कि उन्होंने अपना माल
ख़र्च किया है तो नेक औरतें (पतियों का) आज्ञापालन करने
वाली और इज़्ज़त और माल की रक्षा करने वाली होती हैं इस
लिए कि अल्लाह ने भी इज़्ज़त और माल की रक्षा की है।'

—सूरः निसा, ३४

और मर्दों को निर्देश दिया कि वे औरतों के हक़ ठीक-ठीक अद
कर और उन से नर्मी और सज्जनता से पेश आयें, चाहे उनकी कुछ बात
उन्हें नापसन्द ही क्यों न हों।

क़ुरआन मजीद में है :—

'और उन से सज्जनता का व्यवहार करो और अगर वे तुम्हें
ना-पसन्द हों तो (जल्दबाज़ी न करो।) हो सकता है कि तुम्हें कोई
चीज़ ना-पसन्द हो और अल्लाह उस में तुम्हारे लिए बहुत सारी
भलाई पैदा कर दे।'

—सूरः निसा, १६

अल्लाह ने वैवाहिक सम्बन्ध को प्रेम और दया का सम्बन्ध
बनाया है :—

'उसने तुम्हारे बीच प्रेम और दया पैदा की।' —सूरः रूम, २१

और इस संबंध को ऐसा होना ही चाहिए। प्यारे नबी सल्ल०
कहते हैं :—

'औरतों से अच्छा व्यवहार करने के बारे में मेरी वसीयत क़ुबूल
करो।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

इस्लाम की दृष्टि में अच्छा इन्सान वह है जो अपने घर वालों के
लिए अच्छा हो। हदीस में है :—

'तुम में सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति वह है जो अपने घर वालों के लिए भला हो और मैं अपने घर वालों के लिए तुम सब से अच्छा हूं।'

—तिर्मिजी, दारमी, इब्नेमाजा

मानव-इतिहास म हम किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं जानते जो अल्लाह रसूल हजरत मुहम्मद सल्ल० की तरह अत्यन्त निर्लिप्त और इबादत ार हो। जिस ने दीन के सन्देश को फैलाने और अल्लाह के कलिमे को ंद करने के लिए पूरी ज़िंदगी अर्पण कर दी हो और उस का जीवन ठिनाइयों, मुसीबतों और धर्म-युद्ध का जीवन हो। इन सब बातों के बावजूद ; अपनी पत्नियों के हक़ अति उत्तम ढंग से अदा करता हो और उनके ए सद्व्यवहार, करुणा और प्रेम की मूर्ति सिद्ध हो। अल्लाह से डरने ला और धर्म परायण व्यक्ति अपने घर वालों के लिए कितना भावुक, ितना दयाशील और ममतामय होता है और उनके संबंध में उसकी अभि-चि कितनी जीवंत होती है इसके लिए प्यारे नबी सल्ल० का आदर्श सबसे च्छा आदर्श है और विस्तारपूर्वक उसका विवरण हदीस और सीरत की ताबों में सुरक्षित है।

ौलाद का हक़

वैवाहिक जीवन के फलस्वरूप अल्लाह औलाद दे तो मां-बाप का र्तव्य है कि अल्लाह के बताये हुए ढंग के अनुसार उनका पालन-पोषण रें और उन की शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध करें। यह कर्तव्य मर्द और औरत नों ही का है और दोनों से इस सिलसिले में सवाल होगा। प्यारे नबी ल्ल० ने कहा है:—

'सुनो! तुम में से प्रत्येक व्यक्ति ज़िम्मेदार और रक्षक है और प्रत्येक से उनके बारे में पूछ होगी, जो उसकी ज़िम्मेदारी में होंगे, तो जो व्यक्ति लोगों का हाकिम है उस से उसकी प्रजा के बारे में सवाल होगा और मर्द अपने घर वालों का ज़िम्मेदार है तो उस से उसकी ज़िम्मेदारी के संबंध में पूछा जायेगा और औरत अपने पति के घर और उसकी औलाद की ज़िम्मेदार है और उससे उनके बारे में सवाल होगा।' —बुखारी, मुस्लिम

लड़कियों को लोग आमतौर से नापसन्द करते हैं। अरब और कुछ ारी क़ौमों में तो उन को ज़िंदा गाड़ देने तक की घटनाएं मिलती हैं। ुरआन मजीद ने उन पर कितने प्रभावशाली ढंग से आलोचना की है:—

'और जब कि (क़ियामत के दिन) ज़िंदा गाड़ दी जाने वाली लड़कियों से पूछा जायेगा कि वे किस जुर्म में क़त्ल की गयीं।'

—सूरः तक्वीर, ८-९

लड़कियों की हत्या और उन से घृणा करने का एक कारण यह था कि वे कमाती नहीं हैं, बल्कि उनका बोझ मां-बाप ही पर पड़ता कुरआन मजीद ने इस मनोवृति के सुधार के लिए फ़रमाया :—

'अपनी सन्तान की दरिद्रता के भय से हत्या मत करो, हम उन्हें भी रोज़ी देंगे और तुम्हें भी। निस्सन्देह उनकी हत्या एक बड़ा पाप है।'

—सूरः बनी इस्राईल, ३१

इसी बात को सामने रखते हुए अल्लाह के रसूल सल्ल० ने लड़कि के पालन-पोषण और उनसे सद्व्यवहार करने पर ज़ोर दिया और महान पुण्य बताया—

'जिस व्यक्ति ने दो लड़कियों को पाला-पोसा यहां तक कि वे बालिग़ हो गयीं, मैं और वह क़ियामत के दिन क़रीब होंगे और आप सल्ल० ने अपनी उंगलियों को मिला कर दिखाया कि इतने क़रीब।'

—मुस्लिम

अल्लाहु अक्बर ! लड़कियों के पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा कितना बड़ा बदला है। लड़कियों के पालन के संबंध में अगर मनुष्य कि परीक्षा या अप्रिय परिस्थिति में ग्रस्त हो जाए तो उसे विश्वास रर चाहिए कि यह अप्रिय परिस्थिति इस से अधिक अप्रिय चीज़—नरक उसकी मुक्ति का साधन सिद्ध होगी, अगर उस का व्यवहार लड़किय साथ अच्छा रहा हो। हदीस में है :—

'जो व्यक्ति इन लड़कियों की वजह से किसी कठिनाई में फंस जाये; फिर भी वह उनके साथ अच्छा व्यवहार करे तो ये लड़कियां उसे नरक से बचाने का माध्यम बनेंगी।' —बुखारी, मुस्लिम

औलाद की सब से बड़ी सेवा यह है कि उसे उच्च आचरण अच्छे गुणों से सुसज्जित करने की कोशिश की जाए। अल्लाह के र सल्ल० ने कहा है :—

'किसी बाप ने अपने बेटे को उच्च आचरण से अच्छा कोई उपहार नहीं दिया।'

—तिर्मिज़ी, बैहक़ी

आदमी अपनी सन्तान और अपने घर के सदस्यों पर जो कुछ करता है, अगर वह अल्लाह की प्रसन्नता के लिए और उसके आदेशानु

ख़रता है तो उस के इस ख़र्च की गणना अल्लाह के रास्ते में होगी, जैसा के प्यारे नबी सल्ल० ने कहा है :—

'जब मुस्लिम अपने घर वालों पर अल्लाह की प्रसन्नता के लिए ख़र्च करता है, तो उसका यह ख़र्च भी सदक़ा (नेकी) होता है।'
—बुख़ारी, मुस्लिम

एक अन्य हदीस में इस से भी आगे की बात कही गयी है :—

'सब से अच्छा दीनार (रुपया) जिसे इंसान ख़र्च करता है वही है जिसे वह अपने बाल-बच्चों पर ख़र्च करे और वह है जो अल्लाह के रास्ते में जिहाद के लिए अपने जानवर पर ख़र्च करे और वह दीनार है जो अल्लाह की राह में अपने साथियों पर ख़र्च करे।'
—मुस्लिम

यहाँ विशेष नातेदारों का उल्लेख किया गया है किन्तु प्रत्येक संबंधी हमारी सहायता और हमारी सेवा का अधिकारी है, क्योंकि एक तो वह मनुष्य है और मनुष्य होने के नाते वह हमारी सहानुभूति और हमदर्दी का हक़ रखता है और दूसरी बात यह कि वह हमारा सम्बन्धी है और हमारा कर्तव्य है कि हम उसके नाते-रिश्ते का आदर करें। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है :—

'ग़रीब पर ख़र्च करना सदक़ा (नेकी) है और रिश्तेदार पर ख़र्च करने का दोहरा बदला है, वह सदक़ा भी है और रिश्ते को जोड़ना भी।' —तिर्मिज़ी, नसई, इब्ने माजा, दारमी, अहमद

ग़ैर-मुस्लिमों के हक़

हमें ख़ुदा के जिन बन्दों के हक़ अदा करने की ताकीद की गई है उनका मुस्लिम होना आवश्यक नहीं है। यह बात इससे पहले भी कही जा चुकी है। प्रत्येक मनुष्य, मनुष्य होने के नाते न्याय, दया और सद्व्यवहार का अधिकारी है। प्रत्येक असहाय और निर्धन, असहाय और निर्धन होने की वजह से हमारी हमदर्दी का हक़दार है। हर पड़ोसी के पड़ोसी होने के कारण हम पर उसके हक़ और अधिकार होते हैं, और हर रिश्तेदार—मुसलमान हो या ग़ैर मुस्लिम—रिश्तेदार होने के नाते हम पर रिश्ते के हक़ रखता है। क़ुरआन मजीद की सूरः मुमतहिनः में है :—

'अल्लाह तुम्हें उन लोगों के साथ सद्व्यवहार और न्याय करने से नहीं रोकता जिन्होंने दीन के मामले में तुम से युद्ध नहीं किया और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला। अल्लाह न्याय करने

वालों को पसन्द करता है। वह तो तुम्हें बस उन लोगों से दोस्ती करने से रोकता है, जिन्होंने तुम से दीन के बारे में युद्ध किया, तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला है और तुम्हारे घरों से तुम्हें निकालने में मदद की है और जो लोग उन से दोस्ती करें वही ज़ालिम हैं।'

—मुम्तहिन: ८-९

ये आयतें सूर: मुम्तहिन: की हैं, इस सूर: में मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि वे उन ग़ैर-मुस्लिमों से सम्बन्ध तोड़ लें, जो उन से मुसलमान होने की वजह से युद्ध करते रहे हैं। जिन्होंने उनको उनके वतन से निकाला है या निर्वासित करने में शत्रुओं की मदद की है। दूसरे शब्दों में ये आदेश युद्ध-काल के हैं और हमलावर ग़ैर-मुस्लिमों के सिलसिले में हैं। इन कठिन परिस्थितियों में भी मुसलमानों को उन ग़ैर-मुस्लिमों से सद्-व्यवहार और न्याय करने से रोका नहीं गया है जो उन से लड़ते न हों, मुसलमान उनके साथ न्याय कर सकते हैं, बल्कि उन्हें ऐसा ही करना चाहिए। ख़ासतौर से इन्साफ़ का दामन उन्हें कभी हाथ से नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसंद करता है।

जो लोग इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मन हैं और उन से लड़ रहे हैं अल्लाह ने उन से सद्व्यवहार और न्याय करने से नहीं रोका है। उस ने जिस बात से मना किया है वह यह है कि ऐसे लोगों से दोस्ती का संबंध जोड़ा जाए और इस्लाम और मुसलमानों के हितों को त्याग कर उन से वफ़ादारी की जाए।

ग़ैर-मुस्लिम अत्याचार करें तो मुसलमानों को क्या करना चाहिए? सूर: शूरा में है :—

'और जब उन पर ज़्यादती की जाती है, तो वे उस का बदला लेते हैं और बुराई का बदला उसी जैसी बुराई है और जो माफ़ कर दे और सुधार करे उसका बदला अल्लाह के ज़िम्मे है। निस्सं-देह अल्लाह ज़ालिमों को पसंद नहीं करता और जो व्यक्ति ज़ुल्म किये जाने के बाद उसका बदला ले, उसे बुरा भला नहीं कहा जा सकता। बुरा-भला तो उन्हें कहा जायेगा जो इन्सानों पर ज़ुल्म करते और ज़मीन में नाहक़ उपद्रव मचाते हैं। उनके लिए दर्दनाक अज़ाब है और जो सब्र से काम ले और माफ़ कर दे, तो निश्चय ही यह बड़े साहस के कामों में से है।' —३९-४३

इन आयतों से एक बात यह मालूम हुई कि ज़ुल्म और अत्याचार

अल्लाह को नापसंद है, चाहे इसे मुसलमान करे या ग़ैर-मुस्लिम। दूसरी बात यह मालूम हुई कि ग़ैर-मुस्लिम अगर मुसलमान पर जुल्म और अत्याचार करे तो मुसलमान को उसके अत्याचार के बराबर उस से बदला लेने का अधिकार है। लेकिन उच्च आचरण की बात यह है कि ज्यादती करने वाले से बदला लेने के बजाय उसे माफ़ कर दिया जाए। यही बात दूसरी कई सूरतों में भी कही गई है।

कहा जा सकता है कि सूरः शूरा मक्की सूरः है और इस में जो आदेश दिये गए हैं वे उस समय के हैं जब लोगों को इस्लाम की ओर बुलाया जा रहा हो—लेकिन मदीने पहुंच कर जब मक्के के मुश्रिकों के युद्ध करने की वजह से मुसलमानों को युद्ध करने का यह आदेश हो गया कि, 'जिन लोगों से युद्ध किया जाता है उन पर जुल्म किये जाने की वजह से उन्हें (युद्ध की) इजाज़त दी जाती है और अल्लाह उनकी मदद पर क़ुदरत रखता है।' (हज ३९) तो फिर क्षमा और न्याय करने का उक्त आदेश बाक़ी नहीं रहा। लेकिन ऐसा कहना सही नहीं है, क्योंकि सूरः बक़रः में युद्ध के आदेशों के अन्तर्गत कहा गया है :—

'जो लोग तुम से युद्ध करते हैं अल्लाह की राह में तुम भी उनसे युद्ध करो, लेकिन जुल्म-ज्यादती न करो। अल्लाह तो ज्यादती करने वालों को पसन्द नहीं करता।' —१९०

दो तीन आयतों के बाद फिर कहा :—

'तो जो तुम पर ज्यादती करे तुम भी उस पर उतनी ही ज्यादती करो जितनी उसने की है और अल्लाह की अवज्ञा से बचो और उस से डरो और जान लो कि अल्लाह उनके साथ है जो उस का डर रखते हैं।' —बक़रः १९४

मतलब यह है कि बदला लेने में खुदा से डरना चाहिए और हद से नहीं बढ़ना चाहिए।

यह भी स्पष्ट रहे कि यह आदेश ग़ैर-मुस्लिमों के लिए खास नहीं है। अगर मुसलमान किसी मुसलमान पर जुल्म-ज्यादती करे, तो उस का भी यही आदेश है। आदमी ज़ालिम से उसके जुल्म के बराबर ही बदला ले सकता है, परन्तु जुल्म-ज्यादती करने वाले को क्षमा कर दे तो बहुत ही अच्छा है।

सूरः बक़रः की तरह सूरः माइदा भी मदीने में अवतरित हुई, इस सूरः में दुश्मन ग़ैर-मुस्लिमों के सम्बन्ध में ये निर्देश दिये गये हैं :—

'और ऐसा न हो कि किसी गिरोह की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम इंसाफ़ न करो। इन्साफ़ करो, यही बात तक़्वा (धर्म परायणता) से लगती हुई है। अल्लाह से डरो, निस्सन्देह अल्लाह उन सारे कामों को जानता है जो तुम करते हो।'

—माइदा, ८

केवल न्याय ही नहीं, बल्कि ज़्यादती और दुर्व्यवहार करने वाले ग़ैर-मुस्लिमों से सदव्यवहार करने की नसीहत की गई है, सूरः हा-मीम-सज्दा में है :

'बराबर नहीं हो सकती भलाई और बुराई। तुम (बुराई को) उस चीज़ से टालो जो उत्तम हो तो तुम देखोगे कि जिससे दुश्मनी थी वह (एक दिन अचानक) तुम्हारा आत्मीय मित्र बन गया है।'

—३४

मुसलमान के हक़ और अधिकार

इस्लाम का रिश्ता सबसे ऊंचा, सब से गहरा और सब से मजबूत रिश्ता है। यह रिश्ता जानी दुश्मनों तक को भाई और गहरा मित्र बना देता है। क़ुरआन मजीद में है :-

'और अल्लाह की कृपा को याद करो जो उसने तुम पर की कि तुम परस्पर दुश्मन थे तो अल्लाह ने तुम्हारे दिलों को जोड़ दिया तो तुम उसकी कृपा से भाई-भाई बन गये।'

—आले इमरान, १०३

बन्धुत्व और भाई-चारे का यह रिश्ता हर हालत में बाक़ी रहना चाहिए। अगर संयोगवश दो मुसलमानों या मुसलमानों के गिरोहों के बीच यह रिश्ता कमज़ोर पड़ जाए अथवा टूट जाए तो दूसरे मुसलमानों का कर्तव्य होता है कि इस रिश्ते को पुनः स्थापित करने का पूरा प्रयास करें। क़ुरआन मजीद में है :—

'अगर ईमान वालों के दो गिरोह आपस में लड़ पड़ें तो उन के बीच सुलह करा दो लेकिन अगर एक गिरोह दूसरे गिरोह पर ज़ुल्म ज़्यादती करे तो उस से लड़ो यहां तक कि वह अल्लाह के फ़ैसले की तरफ़ पलट आये। अब अगर वह पलट आये तो उनके बीच न्यायपूर्वक सुलह करा दो और (हर हालत में) न्याय करो, निस्सन्देह अल्लाह न्याय करने वालों को पसन्द करता है। ईमान वाले

तो भाई-भाई ही हैं तो अपने दो भाइयों में सुलह करा दो और अल्लाह से डरो और उसकी अवज्ञा से बचो। उम्मीद है कि (दुनिया और आखिरत में) तुम पर दया की जायेगी।' —हुजुरात, ९-१०

लड़ाई को समाप्त करने का आदेश देने के साथ इस्लाम ने इस ा की भी हिदायत की है कि उन सभी बातों से बचा जाए जो ईमान ों के पारस्परिक सम्बन्धों को खराब करने वाली हैं। अतएव इन ातों के तुरन्त पश्चात है :–

'हे ईमान वालो ! मर्द मर्दों का मजाक़ न उड़ायें, कहीं ऐसा न हो जिनका मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है वे उनसे अच्छे हों जो मज़ाक़ उड़ा रहे हैं। और औरतें औरतों का मज़ाक़ न उड़ायें, जो औरतें मज़ाक़ उड़ा रही हैं उन से वे औरतें अच्छी हो सकती हैं जिन का मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है और अपने (भाई मुसलमान) पर चोट न करो और न एक दूसरे को बुरा नाम दो। ईमान लाने के बाद बुरे नाम रखना बहुत ही बुरी बात है और जो तौबा न करें वही ज़ालिम हैं। हे ईमान लाने वालो ! बहुत से गुमानों से बचो, निस्सन्देह कुछ गुमान गुनाह होते हैं और टोह में न पड़ो और न तुम में से कोई किसी की पीठ पीछे निंदा करे क्या तुम में से कोई इस बात को पसंद करेगा कि अपने मरे हुए भाई का मांस खाये ? इस से तो तुम घिन करोगे। और अल्लाह की अवज्ञा से बचो, निस्सन्देह अल्लाह तौबा क़ुबूल करने वाला और दयावान है।'

—हुजुरात, ११-१२

इन आयतों से स्पष्ट होता है कि ये बुराइयां ईमान वालों के आपसी ा को तबाह कर देने वाली हैं, ये अप्रिय काम नैतिक अपराध की हैसियत ो हैं। ये अपराध खुद उस व्यक्ति के अंतर को भी खराब कर देते हैं और े बाह्य जीवन को भी और इसी तरह इन से उसकी दुनिया और ख़िरत दोनों तबाह हो जाते हैं। इन अपराधों को करने वाला अपने मुसलमानों ही पर जुल्म नहीं ढाता बल्कि खुद अपने ऊपर भी जुल्म ा है। ये काम मानव-प्रकृति के भी प्रतिकूल हैं और हर भले मनुष्य इनसे घृणा करनी चाहिए इन बातों का ईमान से कोई जोड़ नहीं।

ऊंच-नीच की धारणा और अपनी जाति पर घमंड करना यह दोनों बन्धुत्व और प्रेम-भाव के लिए विष हैं। इसलिए इन आयतों के तुरन्त क़ुरआन मजीद ने इस पर भी गहरा प्रहार किया है और बताया है

कि सब इंसान एक ख़ुदा के पैदा किये हुए हैं और एक ही जोड़े की औला
हैं, उनका परिवार और वंश एक ही है, उन में कोई ऊंच-नीच नहीं। ज
ज्यादा नेक और ख़ुदा से डरने वाला है वह ख़ुदा की दृष्टि में अधिक श्रे
और शरीफ़ है, चाहे वह सासांरिक दृष्टि से कितने ही कम दर्जे का समझ
जाता हो :—

'हे इन्सानो ! हम ने तुम्हें एक ही मर्द और औरत से पैदा किया है और तुम्हें जातियों और वंशों में विभाजित किया ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको, तुम में अल्लाह की दृष्टि में सर्वश्रेष्ठ वह है जो अल्लाह से ज्यादा डरने वाला है। —हुजुरात १

इन शिक्षाओं के साथ-साथ क़ुरआन मजीद ने स्वीकारात्मक रूप
यह भी बताया है कि ईमान वाले एक दूसरे के दोस्त और साथी होते हैं-

'मोमिन मर्द और मोमिन औरतें एक दूसरे के मित्र होते हैं।'
—तौबा, ७१

उन के बीच दया और करुणा का सम्बन्ध होता है :–

'वे आपस में दयावान होते हैं।' —फ़त्ह, २६

मुसलमान मुसलमान के लिए कठोर नहीं बल्कि करुणामय होते हैं:

'वे ईमान वालों के लिए नर्म और झुके हुए होते हैं।'
—माईदा, ५४

उनके मध्य प्रेम, आत्मीयता और एकता का ऐसा वातावरण पा
जाता है कि वे सीसा पिलाई हुई (मज़बूत) दीवार की तरह होते हैं औ
गंभीर हालतों में भी उन की यह स्थिति बनी रहती है :–

'निस्सन्देह अल्लाह उन लोगों को पसन्द करता है जो उसके रास्ते में पंक्तिबद्ध हो कर युद्ध करते हैं जैसे वे सीसा पिलाई हुई दीवार हैं।' —सफ़, ४

इन आयतों के अन्तर्गत अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुसलमानों
हक़ और अधिकार विभिन्न हदीसों में बहुत ही अच्छे ढंग से बयान कर दि
हैं। हम नीचे उन में से कुछ सारगर्भित हदीसों का उल्लेख करेंगे।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है :–

'मुसलमान वह है जिस की ज़ुबान और हाथ से मुसलमान सलामत रहें।' —बुख़ारी, मुस्लिम

इस्लाम सारे इंसानों के लिए सुख-शांति का संदेश है। प्यारे न

ल्ल० ने दुनिया के शासकों को इस्लाम को ओर बुलाते हुए अपने पत्रों में लिखा था :—

'इस्लाम ग्रहण करो (दुनिया और आखिरत में) सुरक्षित रहोगे।'

जो लोग इस्लाम ग्रहण करते हैं उन्हें रसूल सल्ल० के वायदे के अनुसार अम्न और सलामती हासिल होनी चाहिए और ईमान वालों का यह कर्तव्य है कि वे रसूल के इस वायदे को सत्य सिद्ध कर दिखायें। जो व्यक्ति मुसलमान होते हुए अपने व्यवहार और अपनी बात से मुसलमानों को नुक़सान या दुख पहुंचाता है वह अपने व्यवहार से साबित करता है कि उसका इस्लाम—अर्थात सलामती के दीन—से वास्तव में नाता नहीं है।

'मुसलमान वह है जिसकी ज़ुबान और हाथ से मुसलमान सलामत रहें।' यह कितना संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित है। इस में उन सभी बातों से बचने की ताकीद की है जिस से किसी मुसलमान को किसी भी प्रकार का नुक़सान पहुंच रहा हो या उसके दिल को दुख पहुंचता हो।

मुसलमान से हमारा संबंध किस तरह का होना चाहिए इस सिलसिले में यह निर्देश दिया गया है :—

'उस ज़ात की क़सम जिस के हाथ में मेरी जान है ! कोई व्यक्ति उस समय तक ईमान वाला नहीं हो सकता जब तक कि वह अपने भाई के लिए वह न चाहे जो वह अपने लिए चाहता है।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

कितनी महत्त्वपूर्ण और कितनी सारगर्भित है यह हदीस। दुनिया और आखिरत की जो उन्नति, जो बुलंदी और जो सफलता हम अपने लिए चाहते हैं वही हम अपने भाई के लिए चाहें। यह हमारे हर भाई का हम पर हक़ है और इस हक़ को अदा किये बिना हम रसूल सल्ल० की दृष्टि में ईमान वाले नहीं समझे जाते।

निम्नलिखित हदीस में रसूल सल्ल० ने मूल धर्म पर प्रकाश डाला है:—

'तमीम दारमी रज़ि० से रिवायत है कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया, दीन वफ़ादारी और हित चाहने का नाम है। यह आप सल्ल० ने तीन बार कहा। हमने पूछा किस की वफ़ादारी ? उन्हों ने फ़रमाया, अल्लाह की, उसकी किताब की, उसके रसूल की,

मुसलमानों के सरदारों की और आम मुसलमानों की।'

—मुस्लिम

मानो धर्म की आत्मा और उसका सार यह है कि मोमिन अल्लाह, उसकी किताब और उसके रसूल की तरह मुसलमानों का भी वफ़ादार और भला चाहने वाला हो। एक अन्य अवसर पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया :-

'मुसलमान मुसलमान का भाई है, न वह उस पर ज़ुल्म करता है और न उसे (ज़ुल्म सहने के लिए) असहाय छोड़ देता है और जो अपने भाई की ज़रूरत पूरी करेगा अल्लाह उसकी ज़रूरत पूरी करेगा और जो किसी मुसलमान की किसी तकलीफ़ को दूर करेगा अल्लाह उसकी आखिरत की तकलीफ़ों को दूर करेगा और जो मुसलमान की बुराई छिपायेगा अल्लाह क़ियामत के दिन उस की बुराई छिपायेगा।' —बुख़ारी, मुस्लिम

एक अन्य हदीस में मुसलमानों के हक़ और अधिकारों का उल्लेख करते हुए आप सल्ल० ने फ़रमाया :-

'आदमी के गुनाहगार होने के लिए यह काफ़ी है कि वह अपने भाई मुसलमान को ना चीज़ समझे। मुसलमान मुसलमान पर पूरे का पूरा हराम है, उसका ख़ून भी, माल भी, इज़्ज़त भी।'

—मुस्लिम

एक और हदीस में भाई चारे के प्रति उसके कर्तव्यों का उल्लेख इन शब्दों में किया गया :—

'बदगुमानी से बचो क्योंकि बदगुमानी सब से झूठी बात है और टोह में न लगो और ऐब तलाश करते न फिरो और एक दूसरे के विरुद्ध न भड़काओ और एक दूसरे से ईर्ष्या न करो न एक दूसरे से दुश्मनी करो, न एक दूसरे की काट करो और अल्लाह के बन्दे और भाई-भाई बन जाओ।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अगर दो मुसलमानों के संबंध ख़राब हो जायें तो उनके लिए जायज़ नहीं कि वे तीन दिन से अधिक संबंध तोड़े रखें, इस बीच में उन्हें अपने संबंध ठीक कर लेने चाहिए—

'किसी व्यक्ति के लिए जायज़ नहीं कि वह अपने भाई (मुसलमान) से तीन दीन से अधिक संबंध तोड़े रखे कि दोनों मिलें तो एक इधर मुंह मोड़ ले और दूसरा उधर मुंह मोड़ ले और इन में

अच्छा वह है जो सब से पहले सलाम करे।' —बुख़ारी, मुस्लिम

मुसलमान को मुसलमान की हर हालत में मदद करनी चाहिए। गर उस पर ज़ुल्म हो रहा है तो उसे ज़ालिम के चगुंल से छुड़ाना चाहिए र अगर वह स्वयं ज़ुल्म कर रहा है तो उस की मदद यह है कि उसे ़्म न करने दिया जाए—

'अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, अपने भाई की मदद करो, ज़ुल्म कर रहा हो या उस पर ज़ुल्म हो रहा हो। एक व्यक्ति ने पूछा, हे अल्लाह के रसूल सल्ल०! अगर उस पर ज़ुल्म हो रहा है तो मैं उसकी मदद करूंगा लेकिन जब वह ज़ालिम हो तो मैं उसकी कैसे मदद करूं? आप सल्ल० ने फ़रमाया उसे ज़ुल्म से रोको, यही उस की मदद है।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

अगर किसी मुसलमान को दुख पहुंचे तो सारे मुसलमानों को दुखी ना चाहिए :-

'तुम देखोगे कि ईमान वाले एक दूसरे पर दया, प्रेम और कृपा करने में एक शरीर की तरह हैं कि जब शरीर का कोई अंग पीड़ित हो जाता है तो सारा शरीर बुखार में तप कर और नींद त्याग कर उसका साथ देता है।' —बुख़ारी, मुस्लिम

मुसलमान के संबंध आपस में ऐसे होने चाहिए कि हर मुसलमान ारे मुसलमानों से शक्ति पाये और उनके लिए शक्ति का कारण सिद्ध । इस प्रकार कोई मुसलमान जीवन के कार्य कलाप में अकेला न हो ल्क बहुत से मुसलमान उसके सहायक हों:—

'अबू मूसा रज़ि० से रिवायत है कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया, मोमिन मोमिन के लिए ऐसा होता है जैसे दीवार कि उसका एक हिस्सा दूसरे हिस्से को मज़बूत बनाता है फिर आपने अपनी उंगलियों को एक दूसरे में डाल कर इसे दर्शाया भी।' —बुख़ारी, मुस्लिम

मुसलमान पर मुसलमान के हक़ और अधिकार का उल्लेख करते ़ अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया :—

'मोमिन के मोमिन पर छः हक़ हैं। बीमार हो तो मिज़ाज-पुरसी करे, मर जाये तो जनाज़ में जाये। दावत दे तो उसे क़ुबूल करे। मुलाक़ात हो तो सलाम करे, छींके तो 'यरहमुकल्लाह' (अल्लाह तुझ पर दया करे) कहे और सामने हो या सामने न हो हर हालत में उसका भला चाहे।' —नसई

चरित्र एवं आचरण

ईमान के बाद इस्लाम में जिस चीज़ का सबसे अधिक महत्व है व
इंसान का चरित्र और आचरण है। वास्तव में इस्लाम कहते ही विश्वा
धारण करने और भले काम करने को हैं। इसीलिए अल्लाह ने अपने स
वायदों के लिए चाहे वे दुनिया से संबंधित हो या आखिरत से ईमान अ
अच्छे कर्म की शर्त रखी है। क़ुरआन मजीद में ईमान के साथ अने
स्थानों पर सुकर्म का उल्लेख किया गया है। हम यहां केवल कुछ आय
पेश करते हैं :—

'मोमिन, 'यहूदी', 'नसारा' (ईसाई), और 'सावई' कोई हो इन में से जो भी (सच-सच) अल्लाह और आखिरत पर ईमान लाएंगे और भले कर्म करेंगे उनका बदला तो उनके रब के पास है और (आखिरत में) उन्हें न तो कोई भय होगा और न वे शोकाकुल होंगे।'

—बक़र: ६२

इसका मतलब यह है कि अल्लाह को किसी गिरोह से प्रेम या दुश्मन
नहीं, वह तो यह चाहता है कि इंसान ईमान और नेक कामों की अमूल
नेमतों से अपनी झोली भर ले। भविष्य की चिन्ता रखने वाले जो व्यक्ति
ऐसा करेंगे वे आखिरत में अल्लाह के अज़ाब से सुरक्षित रहेंगे और उस
प्रतिदान के अधिकारी होंगे :—

'जो लोग ईमान लाये और अच्छे काम किये उन्हें हम ऐसे बाग़ों में जगह देंगे जिनके नीचे से नहरें बहती होंगी और वे उनमें सदैव रहेंगे। यह अल्लाह का सच्चा और पक्का वायदा है। और अल्लाह से ज्यादा सच बात कहने वाला और कौन हो सकता है? न तुम्हारी कामनाओं से कुछ होता है और न किताब वालों की। जो व्यक्ति भी बुरे काम करेगा उस का फल पायेगा और अल्लाह के

हट कर कोई संरक्षक, मित्र और सहायक उसे न मिलेगा (जो उसे सज़ा से बचा सके) और जो कोई नेक काम करेगा—मर्द हो या औरत—यदि वह मोमिन है तो वह जन्नत में दाखिल होगा और उस पर तनिक भी ज़ुल्म न होगा।' —निसा १२२-१२४

इन आयतों से कई बातें स्पष्ट हुईं। एक यह कि ईमान और नेक ाम का फल जन्नत और उसकी सदैव रहने वाली नेमतों के रूप में अवश्य लेगा। दूसरी यह कि मोमिन का साधारण से साधारण नेक काम व्यर्थ ीं जायेगा। तीसरी यह कि बुरे कामों के बदले दंड मिल कर रहेगा—ह और बात है कि मनुष्य उस से तौबा कर ले—खुदा की इस सज़ा से सान को खुदा के सिवा कोई बचा नहीं सकता।

'माल और औलाद सांसारिक जीवन की एक शोभा हैं और शेष रहने वाली नेकियां ही तेरे रब की दृष्टि में फल की दृष्टि से उत्तम हैं और आशा की दृष्टि से भी उत्तम हैं।' —कहफ़ ४६

इससे मालूम हुआ कि धन-दौलत और औलाद ऊपरी और नुमाइशी ीज़ हैं। ये थोड़ा बहुत काम आ भी सकती हैं तो केवल दुनिया में, आख़ि- ा में ये तनिक भी काम आने वाली नहीं। दुनिया और आख़िरत दोनों काम आने वाले अच्छे कर्म ही हैं और अच्छे कर्मों का ही खुदा के यहां य है।

'जो लोग ईमान लाये और जिन्होंने नेक काम किये कृपाशील प्रभु उनके लिए (दिलों में) प्रेम पैदा कर देगा।' —मरयम ९६

सत्य धर्म का रास्ता विरोधों और कठिनाइयों से भरा हुआ है, मगर ु ; आयत बताती है कि कोई गिरोह ईमान और अनुकूल कर्म के गुण वता हो तो आख़िरकार विरोध समाप्त हो जाता है। लोग सत्य को और त्य की ओर बुलाने वाले, दोनों ही को पहचान लेते हैं और उनकी दुश्मनी म और मुहब्बत में परिवर्तित हो जाती है।

'तुम में से जो लोग ईमान लाये और जिन्होंने नेक कार्य किये, अल्लाह ने वायदा किया है कि वह उन्हें ज़मीन में सत्ता प्रदान करेगा जिस प्रकार कि उन से पहले के लोगों को सत्ता प्रदान की थी और जो दीन उस ने उनके लिए पसंद किया है उसे प्रभुत्व प्रदान करेगा और उन को भय के बाद निर्भय कर देगा। वे मेरी बन्दगी करेंगे, मेरे साथ किसी को शरीक न ठहरायेंगे।'

—नूर ५५

इन आयतों से विदित होता है कि सत्ता ऐसे लोगों को मिलती और दीन भी उन्हीं के द्वारा प्रभुत्वशाली होता है जिन में ईमान और काम करने के उच्च गुण पाये जायें। जो गिरोह भी ये गुण पैदा कर दुनिया में उसे चिन्ता रहित जीवन मिल कर रहेगा। उसे दीन को प्रभु शाली बनाने का सौभाग्य प्राप्त होगा और वह सत्ता पाने का अधिक समझा जायेगा। 'भले काम' किसी विशेष नेकी को नहीं कहते बल्कि काम यह है कि मोमिन अपनी पूरी ज़िन्दगी में वह रास्ता अपनाये जिस अल्लाह खुश होता है और जो रसूल की पैरवी का रास्ता है। ऐसा क पर उस की पूरी जिंदगी ही भले कामों में समझी जायेगी अर्थात उस सोना, जागना, खाना, पीना, कमाना और बाल बच्चों को पालना, यहां कि अपनी पत्नी के पास जाना इन सारे कामों की गणना भले और कामों में होगी जिसका वह अल्लाह से बदला पायेगा। हदीस में है :—

'हलाल कमाई की तलाश असल फ़र्ज़ के बाद एक फ़र्ज़ है।'

—शोबुल ईमान, बैहक़ी

इस हदीस में सूर: जुमा की इस आयत की ओर संकेत है :—

'जब जुमा की नमाज़ अदा हो जाये तो ज़मीन में फैल जाओ और अल्लाह का अनुग्रह (हलाल रोज़ी) तलाश करो और अल्लाह को ज़्यादा से ज़्यादा याद करो ताकि तुम सफल हो।'

—जुमा १०

जिस प्रकार नमाज़ के समय नमाज़ फ़र्ज़ है उसी प्रकार नमाज़ करने के बाद हलाल कमाई का हासिल करना भी अनिवार्य है और अल्लाह की कृपा ही से मिलती है। लेकिन रोज़ी के लिए प्रयास करते स आवश्यक है कि इंसान अल्लाह को ज़्यादा से ज़्यादा याद रखे, इस तरह हराम कमाई से बच सकेगा और दुनिया में धन दौलत के मोह से भी रहेगा। जब दौलत उसके हाथ आये तो उसे अल्लाह के आदेशानुसार कामों में खर्च करे। मनुष्य के लिए सफलता प्राप्त करने का मार्ग यही

एक अन्य हदीस में है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया

'एक दीनार (अशरफी) वह है जो तुम ने अल्लाह की राह में खर्च किया हो, एक दीनार वह है जो तुम ने गुलाम को मुक्त कराने में लगाया हो, एक दीनार वह है जो तुम ने किसी ग़रीब के लिए दान किया हो और एक दीनार वह है जो तुम ने अपने बाल बच्चों पर खर्च किया हो, इन में सबसे ज़्यादा बदला उस

दीनार पर मिलेगा जो तुम नें अपने बाल बच्चों पर खर्च किया होगा।' —मुस्लिम

इस का मतलब यह है कि जो व्यक्ति अपनी हलाल कमाई से अल्लाह को खुश करने के लिए भलाई के कामों में खर्च करता है और साथ ही अपने बाल-बच्चों का हक़ भी अदा करता है उसे बाल-बच्चों पर खर्च करने का असाधारण बदला मिलेगा।

एक दूसरी हदीस में है :—

'हर तस्बीह (१) (अल्लाह की पाकी और बड़ाई बयान करने) में नेकी है, हर तकबीर (अल्लाह की महानता बयान करने) में नेकी है, हर तह्मीद (अल्लाह की प्रशंसा बयान करने) में नेकी है, हर तह्लील (अल्लाह ही को पूज्य कहने) में नेकी है'। नेकी का आदेश देने में नेकी है तुम्हारे गुप्त अंग (के उचित इस्तेमाल) में नेकी है। सहाबा रज़ि० ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! हम में का कोई आदमी अपनी कामवासना की पूर्ति करता है तो उस में भी उसके लिए पुण्य फल है? आप सल्ल० ने फ़रमाया, 'सोचो तो सही! अगर गुप्त अंग को वह ग़लत जगह इस्तेमाल करता तो उसे गुनाह होता कि नहीं, ऐसे ही जब उसे हलाल और उचित जगह प्रयोग किया तो उसे अच्छा बदला मिलेगा।' —मुस्लिम

यह है अल्लाह की कृपा और उदारशीलता! जायज़ तरीक़े से कामवासना की पूर्ति करो तो भी वह पुण्यफल देता है।

ज्ञात हुआ कि 'भला काम' यह है कि जो काम करो अल्लाह की प्रसन्नता के लिए, उस की और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करते हुए और अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाओं के भीतर रहते हुए करो।

'भले काम' का सर्व प्रथम और मूल अंश यह है कि मनुष्य का सम्बन्ध अल्लाह से सही हो, अल्लाह से सम्बन्ध के बारे में विस्तारपूर्वक विवरण 'अल्लाह से ताल्लुक़' अध्याय के अन्तर्गत आ चुका है।

'भले काम' का दूसरा महत्वपूर्ण और मौलिक अंश बंदों के हक़ और अधिकार को अदा करना है। 'बन्दों के हक़' का विवरण भी बन्दों के

---

१. तस्बीह, तक्बीर, तह्मीद और तह्लील के उच्चरित किये जाने वाले अरबी शब्द क्रमशः ये हैं : सुब्हानल्लाह, अल्लाहु अक्बर, अल्हम्दुलिल्लाह और ला इला-ह-इल्लल्लाह।

हक़ और अधिकार' नामी अध्याय में आ चुका है।

'भले काम' का तीसरा महत्वपूर्ण और बुनियादी पहलू वह है जिसे आमतौर से 'नैतिकता' का नाम दिया जाता है। यहां हम इसी पर कुछ प्रकाश डालेंगे।

दीन में नैतिकता का क्या महत्व है ? इस का अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने आने का उद्देश्य बयान करते हुए फ़रमाया :—

> 'मुझे इसलिए नबी बना कर भेजा गया है कि मैं सुशीलता को पूर्ण रूप दूं। आप सल्ल० का कथन यह भी है कि मुझे इसलिए भेजा गया है कि मैं नैतिक श्रेष्ठताओं को पूर्णतः तक पहुंचा दूं।'

आप सल्ल० ने किया भी यही। आप सल्ल० ने नैतिक सिद्धांतों को बहुत स्पष्ट रूप से बयान किया, उन के महत्व पर प्रकाश डाला, पूरी जिंदगी में उन्हें क्रियान्वित रूप दिया, यह देखे बग़ैर कि दूसरे लोग इन सिद्धांतों पर चलते हैं या नहीं, इन सिद्धांतों पर चलने की ताकीद की। लाभ और हानि से बेपरवाह हो कर नैतिक सिद्धांतों से जुड़े रहने का आदेश दिया और इन्हें जाति, परिवार, राष्ट्र और देश हर एक के हित से सर्वोपरि बताया और मानव-जाति को ऐसी जीवन प्रणाली दी जिसके एक-एक अंश में नैतिक मूल्यों को समाविष्ट कर दिया। इसी जीवन प्रणाली को आप सल्ल० ने स्वयं स्थापित किया और इस्लामी समुदाय को उसे स्थापित और लागू करने पर नियुक्त किया। इसके साथ-साथ आप सल्ल० ने नैतिक शिक्षाओं को अपने जीवन में व्यावहारिक रूप देकर एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत किया जिसका मानव इतिहास में कोई उदाहरण नहीं मिलता। स्वयं अल्लाह ने आप सल्ल० को महान नैतिकता पर प्रतिष्ठित बताया है:—

> 'और निस्संदेह तुम महान सुशीलता पर प्रतिष्ठित हो।' —क़लम ४

अल्लाह के नबी सल्ल० की दृष्टि में सब से उत्तम व्यक्ति वह है जो शील-स्वभाव में सबसे अच्छा हो :—

> 'तुम में सबसे अच्छे वे लोग हैं जिन का अख़लाक़ तुम में सब से अच्छा हो।' —बुख़ारी, मुस्लिम

ऐसे ही लोग अल्लाह और उसके रसूल को अधिक प्रिय भी हैं हदीस में है :—

> 'मुझे तुम में वे व्यक्ति अधिक प्रिय हैं जो तुम में सब से अच्छे स्वभाव वाले हों।' —बुख़ारी

अब हम क़ुरआन और हदीस की रोशनी में मूल नैतिक शिक्षाओं वर्णन करेंगे।

ाय

न्याय करना दीन की सबसे महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा है। न्याय है कि मनुष्य अल्लाह और उसके बंदों के हक़ ठीक-ठीक अदा करे और याय यह है कि वह अल्लाह का या उसके किसी बंदे का कोई हक़ मारे क (अनेकश्वरवाद) को क़ुरआन में इसीलिए 'सब से बड़ा अन्याय' कहा ा है क्योंकि ऐसा करके इंसान अल्लाह का सब से बड़ा हक़ मार लेता। जब वह अल्लाह के साथ किसी और को शरीक समझता है। अन्याय र अत्याचार यह भी है कि अल्लाह की आज्ञा का उल्लंघन करके मनुष्य यं अपने ऊपर अन्याय करने लग जाए और इसके फलस्वरूप अपनी दुनिया र आखिरत अपने ही हाथों तबाह कर ले। क़ुरआन मजीद में जुल्म का ब्द प्रायः इसी मायने में इस्तेमाल हुआ है।

'और हम ने (यातना देकर) उन पर जुल्म नहीं किया (अवज्ञा और विद्रोह करके) उन्होंने स्वयं अपने ऊपर जुल्म किया।'

—हूद १०१

'बंदों के हक़ और अधिकार' में न्याय और जुल्म का वर्णन सविस्तार आ चुका है।

दया, सदव्यवहार और लोक-सेवा भी दीन की महत्वपूर्ण और मूल क्षा है और इसका भी 'बंदों के हक़' में विस्तार से उल्लेख हो चुका है।

च्चाई

सच बोलना और सच्चाई को अपनाना भी दीन की एक महत्वपूर्ण र मौलिक शिक्षा है। आदमी हर हालत में सच बोले, वह सत्य पर चलने ला और सत्यवादी हो, उसका बाह्य जीवन उसके अन्तर के अनुकूल हो, ान का भी सच्चा हो, चरित्र का भी और जब बोले तो सच बोले। वह र से पैर तक सच्चाई में डूबा हो।

जो व्यक्ति यह निश्चय कर लेता है कि वह सदा सत्य बोलेगा और ठ के निकट भी न जायेगा, उसके लिए बुराई से बचना और नेकी के रास्ते र चलना बहुत सरल हो जाता है। सच बोलने का परिणाम यह होता है क उसकी आत्मा पवित्र हो जाती है और वह चरित्रवान हो जाता है, फिर ह अपनी ग़लतियों को छिपाने के लिए झूठ नहीं बोल सकता और मोमिन

होने की वजह से वह अपराधों के निकट नहीं जा सकता। इसके विपरं
झूठ बोलने वाला व्यक्ति न केवल यह कि अपनी आत्मा को अपवित्र कर
है और अपने आचरण को बिगाड़ लेता है, बल्कि अपने लिए अन्य कित
ही बुराइयों के रास्ते भी खोल लेता है क्योंकि, वह झूठ बोलकर बहुत
बुराइयां आसानी के साथ कर बैठता है और फिर उन्हें छिपा भी लेता।
प्यारे नबी सल्ल० ने कहा है :—

'सच्चाई को अपनाओ क्योंकि सच्चाई नेकी की ओर वफ़ादारी की ओर ले जाती है और नेकी और वफ़ादारी जन्नत तक पहुंचाती है। और जब इंसान सदैव सच बोलता और सच्चाई की तलाश में रहता है तो वह समय आ जाता है कि वह ख़ुदा के यहां सत्यवादी लिख दिया जाता है और झूठ से दूर भागो क्योंकि झूठ अल्लाह की अवज्ञा की तरफ़ ले जाता है और अल्लाह की अवज्ञा नरक में पहुंचा देती है। और जब आदमी झूठ बोलता ही रहता है तो वह समय आ जाता है कि वह ख़ुदा के यहाँ 'असत्यवादी' लिख दिया जाता है।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

झूठी गवाही देना और झूठी क़सम खाना भी एक प्रकार का
ही है, बल्कि बहुत ही बड़ा झूठ है। हदीस में है :—

'महा पाप ये है—अल्लाह के साथ किसी को शरीक करना, मां-बाप की बात न मानना, किसी प्राणी की हत्या करना और झूठी क़सम खाना। एक दूसरी रिवायत में है कि झूठी गवाही देना।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

क़ुरआन मजीद ने सच्चाई को ईमान वालों के मौलिक गुणों
बताया है :—

'(ईमान वाले) सब्र करने वाले, सच बोलने वाले, कहा मानने वाले, खर्च करने वाले (ख़ुदा की राह में), और रात की अन्तिम घड़ियों में अपने गुनाहों की क्षमा चाहने वाले होते हैं।'

—आले इमरान १७

क़ुरआन ने केवल इतना ही नहीं कहा बल्कि उस ने सत्यवा
को प्रत्यक्ष धर्म की संज्ञा दी है क्योंकि धर्म इसके अलावा कुछ नहीं चा
कि मनुष्य सिर से पैर तक ख़ुदा का सच्चा बन्दा बने। सूरः बक़रः में ई
वालों के गुणों का उल्लेख करने के बाद फ़रमाया :—

'जो लोग ये गुण रखते हैं वही (ईमान के दावे में) सच्चे हैं

और वही अल्लाह का भय रखने वाले और धर्म परायण लोग हैं।'

—बक़र: १७७

अल्लाह के रास्ते में जान और माल का बलिदान देकर मनुष्य यह साबित कर सकता है कि वह अपने ईमान के दावे में सच्चा है। क़ुरआन में है :—

'ईमान वालो में कितने ही ऐसे लोग है जिन्होंने अल्लाह से जो वायदा किया था, उसे सच्चा कर दिखाया। उनमें से कुछ ने तो (जान, माल देकर) अपना अरमान पूरा कर लिया और कुछ प्रतीक्षा में हैं, उन्होंने (अपने इरादे में) परिवर्तन नहीं किया है।'

—अह्ज़ाब २३

जो ईमान वाले सच्चाई की मूर्ति होते हैं और ईमान और चरित्र की दौलत से मालामाल होते हैं, क़ुरआन उन्हें 'सिद्दीक़' (सत्यवान) के नाम से सम्मानित करता है जिन को नबियों के बाद सबसे श्रेष्ठ स्थान प्राप्त होता है :—

'जो लोग अल्लाह और रसूल का कहा मानेंगे वे उन लोगों के साथ रहेंगे जिन पर अल्लाह ने कृपा की है, ये लोग हैं नबी, सिद्दीक़, शहीद और नेक काम करने वाले और ये लोग कितने अच्छे साथी हैं।'

—निसा ६९

मुसलमान अगर सत्यवादी और सच्चे मुसलमान बनना चाहते हैं तो उनके लिए ज़रूरी है कि वे सत्यवादी और सच्चे ईमानधारियों की संगत ग्रहण करें। क़ुरआन मजीद में है :—

'हे ईमान लाने वालो! अल्लाह की अवज्ञा से बचो और सच्चे लोगों के साथ हो जाओ।'

—तौबा ११९

सच्चे ईमान के मुक़ाबले में ढोंग तो हो सकता है ईमान नहीं। कोई व्यक्ति यह ढोंग कर सकता है कि ज़ुबान से तो वह दीन और ईमान का दावा करे, लेकिन उसका दिल और उसका व्यवहार, ईमान से वंचित हो, इसी को क़ुरआन ने निफ़ाक़ (कपट) की संज्ञा दी है :—

'जब मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं, हम गवाही देते हैं कि तुम अल्लाह के रसूल हो और अल्लाह जानता है कि तुम अल्लाह के रसूल हो और अल्लाह गवाही देता है कि मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) झूठे हैं।'

—मुनाफ़िक़ून १

प्रतिज्ञा पालन

इस्लाम की एक और महत्वपूर्ण तथा मौलिक शिक्षा प्रतिज्ञा पालन है। अल्लाह से मोमिन बंदे ने बंदगी करने की जो प्रतिज्ञा की है उसे पूरा करना ही मूल धर्म है और यह प्रतिज्ञा जान और माल सब कुछ न्योछावर करके पूरी की जानी चाहिए। सच्चे ईमान वालों को उल्लेख करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया :—

> 'ईमान वालों में कितने ही ऐसे लोग हैं जिन्होंने अल्लाह से जो प्रतिज्ञा की थी उस में सच्चे निकले। उनमें से कुछ ने तो (जान देकर) अपना अरमान पूरा कर लिया और कुछ अभी प्रतीक्षा में हैं, उन्होंने (अपनी प्रतिज्ञा को) कुछ भी बदला नहीं है।
>
> —अहज़ाब २३

ख़ुदा से बंदगी की प्रतिज्ञा करके उसे भंग करना बड़े ही ख़तरे की बात है। यहूदियों ने यही अपराध किया था जिस के नतीजे में वे दुनिया और आख़िरत दोनों में ख़ुदा की रहमत से वंचित हो गये। क़ुरआन मजीद में है :—

> 'उन पर प्रतिज्ञा भंग करने के कारण हमारी फिटकार पड़ी और हमने उनके दिलों को कठोर कर दिया।' —माइदा १३

यह मामला अल्लाह से की हुई प्रतिज्ञा का है। इसी प्रकार मनुष्यों से किये हुए वायदे को पूरा करना भी मुसलमानों का कर्तव्य है, बस शर्त यह है कि वह वायदा जो किया गया है जायज़ और उचित हो। क़ुरआन में है :—

> 'अल्लाह से किए हुए वायदे को पूरा करो जब भी तुम वायदा करो और क़समों को पक्की कर लेने के बाद तोड़ो नहीं, जबकि तुम अल्लाह को अपने ऊपर निगरां भी बना चुके हो। जो कुछ भी तुम करते हो अल्लाह उसे जानता है।' —नह्ल ९१

अर्थात वायदे को हर हालत में पूरा करो, खास तौर से उस समय जब तुम अल्लाह को बीच में डाल कर और उसकी क़सम खा कर किसी से वायदा करते हो। इस हालत में तो वचन भंग करने का दुस्साहस नहीं करना चाहिए। वायदा ख़ुदा से किया जाए या मनुष्यों से, क़ियामत के दिन उस के बारे में सवाल होगा :—

> 'वायदे को पूरा करो निस्सन्देह वायदे के बारे में (क़ियामत के दिन) सवाल होगा।' —बनी इसराईल ३४

अमानतदारी

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा अमानतदारी है। इस्लाम के अनुसार इंसान की पूरी जिंदगी और उसके समस्त साधनों का वास्तविक मालिक केवल अल्लाह है, जिसने ये चीजें मनुष्यों को अमानत के रूप में प्रदान की हैं, इसीलिए ये सभी चीजें जो मनुष्य को प्राप्त हैं, अल्लाह की अमानत है। इस अमानत को अल्लाह की इच्छा के अनुसार ही इस्तेमाल करना आवश्यक है, क्योंकि आखिरत में अल्लाह के सामने इस बात का उत्तर देना है कि उसने इस अमानत को अल्लाह की इच्छा के अनुसार प्रयोग करके अमानतदारी का सुबूत दिया या अपनी मर्ज़ी चलाकर अमानतदारी की मर्यादा को आघात पहुंचाया।

अल्लाह की अमानत के अलावा मनुष्यों की भी अमानतें होती हैं, जो वे हमारे पास रखते हैं या कुछ ज़िम्मेदारियां वे हमारे ऊपर डालते हैं और हम उन्हें स्वीकार कर लेते हैं या वे अपनी कुछ निजी बातें हम से कहते हैं। ये सभी अमानतें हैं और मोमिन का कर्तव्य है कि अल्लाह की अमानत की तरह इनका भी आदर करे। क़ुरआन मजीद कहता है :—

'हे ईमान लाने वालो ! अल्लाह और रसूल से विश्वासघात न करो और न अपनी अमानतों में खियानत करो जबकि तुम जानते हो।'
—अनफ़ाल २७

ईमान वालों के गुणों का उल्लेख करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया :—

'और ये वे लोग हैं जो अपनी अमानतों और वायदों का ख्याल रखते हैं।'
—मोमिनून ८

मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) के दुर्गुण बयान करते हुए अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया :—

'चार आदतें हैं, जिस किसी में ये चारों हों वह पक्का मुनाफ़िक़ है और जिस म इन में से कोई एक आदत हो तो उसमें निफ़ाक़ की एक आदत होगी, जब तक कि वह उसे छोड़ न दे। वे आदतें ये हैं :—

अमानत रखी जाए तो खियानत करे, बात करे तो झूठ बोले, वायदा करे तो उसे न निभाये और झगड़ा हो जाए तो ख़ुदा की अवज्ञा करे और अश्लील बातों पर उतर आये।'

—बुखारी, मुस्लिम

ख़ियानत, झूठ बोलना, वायदा पूरा न करना और झगड़े में न्याय से हट कर अश्लीलता पर उतर आना ये ऐसी आदतें हैं जो रसूल के कथनानुसार मनुष्य को 'ख़ालिस मुनाफ़िक़' बना देती हैं, ऐसा व्यक्ति केवल कहने का मुसलमान होता है, लेकिन वास्तव में इस्लाम से उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं, इसीलिए ये आदतें बड़ी ही खतरनाक हैं। इस हदीस से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अमानतदारी, सच बोलना, वायदे को निभाना और दुश्मनी तक में न्याय और सज्जनता पर अटल रहना ईमान वालों के गुण हैं।

ईमानदारी

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और बुनियादी शिक्षा ईमानदारी है। मोमिन लेन-देन का खरा और मामले का सच्चा होता है। वह अपने कर्तव्यों को ईमानदारी से पूरा करता है और जब वह दूसरों से काम लेता है तो उन्हें उनका पसीना सूखने से पहले ही उनकी उचित मजदूरी देता है। वह बेईमानी और धोखा देकर कोई चीज़ हासिल नहीं करता। लोगों की अनभिज्ञता और विवशता से अनुचित लाभ नहीं उठाता, अपने हक़ से अधिक नहीं लेता। उसके लेने और देने के पैमाने अलग-अलग नहीं होते, बड़े से बड़े लालच के अवसर पर भी अपने ईमान पर आंच नहीं आने देता। अपनी अन्तरात्मा का कहीं भी सौदा नहीं करता वह अच्छी तरह जानता है कि ईमानदारी से हट जाने वाले लोग अल्लाह की दृष्टि में भी बुरे होते हैं और मनुष्य भी उन्हें अच्छा नहीं समझते। क़ुरआन मजीद में है :—

> 'जो लोग अल्लाह से किये हुए वायदे और अपनी क़समों का (दुनिया के) थोड़े मूल्य पर सौदा करते हैं, उनके लिए आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं और उनसे न तो अल्लाह क़ियामत के दिन बात करेगा और न उन की ओर देखेगा और न उन्हें (गुनाहों से) पाक करेगा (कि जन्नत में जा सकें) उनके लिए तो दुखदायिनी यातना है।' —आले इम्रान ७७

मोमिन जानता है कि लेन-देन और मामलों में गड़बड़ केवल वही लोग करते हैं जो ख़ुदा और आख़िरत पर विश्वास नहीं रखते :—

> 'तबाही है डंडी मारने वालों की। ये जब दूसरे लोगों से नाप कर लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं और जब उन्हें नाप या तोल कर

देते हैं तो घटा कर देते हैं। क्या उन्हें विश्वास नहीं कि उन्हें एक बड़े दिन के अवसर पर जीवित किया जाएगा जबकि लोग सारे संसार के रब के सामने खड़े होंगे।' —मुत्तफ़िफ़ीन १-६

मोमिन का चरित्र इससे भिन्न होता है, क्योंकि उसके लिए अल्लाह आदेश है :—

'जब तुम नाप कर दो तो पूरा नाप कर दो और सीधी सच्ची तराजू से तोलो यही उत्तम है और इसका परिणाम भी अच्छा है।' —बनी इसराईल ३

कारोबार अगर सच्चाई और ईमानदारी से किया जाए तो वह बड़ी ी बन जाता है। हदीस में है :—

'सच्चा और ईमानदार व्यापारी (आखिरत में) नबियों, सिद्दीक़ों और शहीदों के साथ होगा।' —तिर्मिज़ी, इब्नेमाजा

किसी का माल ग़लत तरीक़े से लेना और इस मक़सद के लिए श्वत देना भी मना है :—

'एक दूसरे का माल ग़लत ढंग से मत खाओ, न अपने माल (रिश्वत के तौर पर) अधिकारियों को दो, ताकि लोगों के माल का एक भाग हक़ मार कर जानते-बूछते हड़प कर लो।'

—बक़र: १८८

इस प्रकार जो माल हाथ आता है वह हराम होता है और हराम ाने वाले की दुआ तक अल्लाह क़ुबूल नहीं करता :—

'अबूहुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, अल्लाह पाक है और पाक चीज़ ही क़ुबूल करता है। उस ने ईमान वालों को वही आदेश दिया है जो उसने अपने रसूलों को दिया है। अतः उस ने फ़रमाया, 'हे रसूलो! पवित्र चीज़ें खाओ और भले कम करो।' और फ़रमाया, 'हे ईमान वालो! जो पाक चीज़ें हमने तुम्हें प्रदान की हैं उन्हें खाओ।' फिर आप सल्ल० ने एक व्यक्ति के बारे में कहा कि वह लम्बा सफ़र करता है और आसमान की तरफ़ हाथ फैला कर और हे प्रभु, हे प्रभु! कह कर दुआ करता है, लेकिन उसका खाना हराम होता है, पीना हराम होता है, वस्त्र हराम होता है और वह हराम से पला बढ़ा होता है तो उस की दुआ कैसे क़ुबूल होगी।' मुस्लिम

जो शरीर हराम माल से पला-बढ़ा हो, उसके लिए नरक ही उचित रहेगा। प्यार नबी सल्ल० का कथन है :—

'जो शरीर हराम से बना हो वह जन्नत में नहीं जायेगा जो मांस हराम से बना हो उसका उचित ठिकाना जहन्नम ही है।'

—अहमद, दारमी, बैहक़ी

मोमिन हराम चीज़ों से तो बचता ही है, साथ ही साथ उन चीज़ों से भी दूर रहता है जिनमें कुछ सन्देह हो, हदीस में है :–

'हलाल स्पष्ट है और हराम भी स्पष्ट है लेकिन इन दोनों के बीच में कुछ सन्दिग्ध चीज़ें हैं जिन के बारे में बहुत से लोग नहीं जानते। तो जो ऐसी सन्दिग्ध चीज़ों से बचा रहा उसने अपने दीन और अपनी प्रतिष्ठा को बचा लिया, लेकिन जो इन सन्देह की चीज़ों में पड़ गया वह हराम में पड़ गया। जैसे कि चरवाहा वर्जित चराहगाह के आस-पास चराए तो वह उस चरागाह में भी चराने लगेगा। सुनो ! हर बादशाह की एक चरागाह होती है। सुन ! अल्लाह की वर्जित चरागाह हराम चीज़ है।'

—बुखारी-मुस्लिम

लज्जा

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा लज्जा है। लज्जा यह है कि मनुष्य को अश्लील और बुरे कामों से घिन आए। इस्लाम के मूल सिद्धांत बयान करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया :—

'निस्सन्देह अल्लाह न्याय का, एहसान का, रिश्तेदारों को देने का आदेश देता है और अश्लील कर्म, बुराई और सरकशी से रोकता है। वह तुम्हें सदोपदेश देता है ताकि तुम ध्यान दो।'

—नह्ल ९०

इस आयत से विदित होता है कि मनुष्य के अन्दर स्वीकारात्मक रूप से तीन मौलिक गुण होने चाहिएं, १. न्याय, २. एहसान और ३. रिश्ते-नाते वालों को देना और तीन बातें ऐसी हैं, जिन से उस की ज़िंदगी पाक होनी चाहिए, १. अश्लील कर्म, २. बुराई और, ३. सरकशी। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया :–

'लज्जा सर्वथा भलाई है।' —बुख़ारी, मुस्लिम

'लज्जा सारी भलाइयों का स्रोत है।' नबी सल्ल० का कथन है :-

'लज्जा सदैव भलाई ही का कारण बनती है।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

निर्लज्ज व्यक्ति हर बुरा काम कर सकता है। हदीस में है :—

'पिछले नबियों के कलाम से लोगों नें जो कुछ पाया है, उस में एक बात यह भी है, जब तुम्हें शर्म नहीं तो जो चाहे करते फिरो।' —बुखारी

व्यभिचार सब से बड़ी निर्लज्जता की बात है। इस्लाम ने उसे बहुत बड़ा गुनाह बतलाया है और उसके लिए कठोरतम सज़ा भी रखी है। ...र: बनी इसराईल में है :—

'व्यभिचार के निकट भी न जाओ निस्सन्देह यह एक अश्लील कर्म है और बुरा रास्ता है।' —बनी इसराईल ३२

व्यभिचार के दंड की घोषणा करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया :—

'व्यभिचार करने वाली औरत और व्यभिचार करने वाला मर्द इन में से हर एक को सौ-सौ कोड़े मारो और अल्लाह के दीन के मामले में तुम्हें उन पर तरस नहीं आना चाहिए, यदि तुम अल्लाह और आख़िरत पर विश्वास रखते हो और उन्हें सज़ा देते समय ईमान वालों का एक गिरोह मौजूद रहे।' —नूर २

हदीस से यह भी मालूम होता है कि अगर विवाहित मर्द या औरत व्यभिचार के दोषी हों तो उनकी सज़ा यह है कि उन्हें पत्थर मार-मार कर हलाक कर दिया जाए।

स्त्रियों की तरह पुरुषों से बुरा और अश्लील काम करना भी बहुत बड़ी निर्लज्जता की बात है। हदीस में है :—

'जिस किसी को लूत की क़ौम की तरह अश्लील कर्म करते देखो तो दोनों व्यक्तियों को क़त्ल की सज़ा दो।'

—तिर्मिज़ी, इब्ने माजा

इस्लाम ने केवल व्यभिचार ही से नहीं रोका है, बल्कि उसके साथ-साथ उन बातों से भी रोका है जो व्यभिचार को प्रेरणा देती या उसका कारण बनती हैं। उसने काम सम्बन्धी बात-चीत, काम-वासना से भरी दृष्टि, स्पर्श और काम-वासना सम्बन्धी बातों की तरफ़ जाने को व्यभिचार ही में गिना है। हदीस में है :—

'आँखों का व्यभिचार बुरी नज़र है, कानों का व्यभिचार (काम-वासना से) सुनना है। ज़ुबान का व्यभिचार (काम-वासना सम्बन्धी) बात-चीत करना है। हाथ का व्यभिचार (काम-वासना के लिए) हाथ बढ़ाना है। पैर का व्यभिचार (काम सम्बन्धी) बातों की ओर चलना है। दिल चाहता और कामना करता है और

शमगाह या तो उसकी पुष्टि कर देती है या उसे झुठला देती है।'
—मुस्लिम

इस्लाम ने इस बात की भी निंदा की है कि समाज में अश्ली बातें फैलें। क़ुरआन मजीद में है :–

'जो लोग चाहते हैं कि ईमान वालों में अश्लीलता फैले उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दुखदायिनी यातना है।' —नूर १९

किसी पतिव्रता स्त्री पर व्यभिचार का इल्ज़ाम लगाना बहुत ब गुनाह है। क़ुरआन मजीद में है :–

'जो लोग सतवंती स्त्रियों पर (व्यभिचार की) तोहमत लगाय फिर चार गवाह न लायें तो उन्हें अस्सी कोड़े मारो और उनकी गवाही कभी स्वीकार न करो, ये ही लोग अवज्ञाकारी हैं।'
—नूर ४

प्यारे नबी सल्ल० ने घातक गुनाहों का उल्लेख करते हुए फ़रमाया:

'सात घातक गुनाहों से बचो। सहाबा रज़ि० ने पूछा, हे अल्लाह के रसूल ! वे गुनाह कौनसे हैं? आप सल्ल० ने फ़रमाया, १. अल्लाह के साथ किसी को शरीक करना, २. जादू करना, ३. किसी को क़त्ल करना जिसे अल्लाह ने हराम किया है, यह और बात है कि हक़ का यही तक़ाज़ा हो। ४. ब्याज खाना, ५. यतीम का माल हड़प करना, ६. युद्ध के समय पीठ फेर कर भागना, ७. सतवंती, ईमान वाली भोली-भाली स्त्रियों पर व्यभिचार की तोहमत लगाना।'
—बुख़ारी, मुस्लिम

कुछ अपराध ऐसे हैं जो ईमान के साथ एकत्र नहीं हो सकते अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

'व्यभिचार करने वाला जब व्यभिचार करता है तो ईमान की दशा में व्यभिचार नहीं करता, चोरी करने वाला जब चोरी करता है तो ईमान की दशा में चोरी नहीं करता और जब शराब पीता है तो ईमान की हालत में शराब नहीं पीता और जब लूट मार करता है, जबकि लोगों की निगाहें उसकी ओर उठती हैं तो वह ईमान की दशा में लूटमार नहीं करता और जब तुम में से कोई व्यक्ति कपट करता है तो ईमान की दशा में कपट नहीं करता। तुम इन सब गुनाहों से दूर भागो और इब्ने अब्बास की रिवायत में है कि और जब वह क़त्ल करता है तो ईमान की हालत में नहीं करता।'
—बुख़ारी, मुस्लिम

इस हदीस का आशय यह है कि इस तरह के अपराध ईमान के
ल्कुल प्रतिकूल हैं, मोमिन की ज़िंदगी को इनसे बिल्कुल पाक होना
हिए। अगर ग़लती से कोई अपराध हो जाए तो तौबा करके अपने ईमान
रक्षा करनी चाहिए।

नम्रता

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा नम्रता है।
आन मजीद में है :–

'उसने इंकार किया और घमंड किया और काफ़िर हो गया।'

बक़र: ३४

अर्थात शैतान ने खुदा का हुक्म नहीं माना, वह आदम के आगे नहीं
का क्योंकि वह अपने आप को आदम (अलै०) से बड़ा समझता था, उस
घमंड और अहंकार का रास्ता अपनाया और इस प्रकार अधर्मी हो
रहा।

जो बात शैतान की गुमराही के सिलसिले में कही गई है, वही बात
ज़माने के उन सभी लोगों के लिए है जो सत्य को झुठलाते हैं। वास्तव
सत्य के इंकार करने में वही लोग आगे-आगे रहे जो धन और सत्ता के
में चूर थे। उन्होंने इस बात में अपना अपमान समझा कि वे अल्लाह के
मने झुकें और उसके रसूल का आज्ञानुपालन करें। क़ुरआन मजीद में
इंकार को बहुत निन्दित ठहराया गया है। सूर: आराफ़ में है :–

'जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया और उनके मुक़ाबले में
अकड़ दिखायी ऐसे लोग नरक वाले हैं, वे इस में हमेशा रहेंगे।'

—आराफ़ ३६

एक दूसरी जगह है :–

'अल्लाह किसी डींगे मारने वाले, इतराने वाले व्यक्ति को पसंद
नहीं करता।' —हदीद, २३

नबियों के सन्देश को जो असहाय और निर्धन लोग स्वीकार करते
उन्हें ये अहंकारी घृणा की दृष्टि से देखते और कहते इन हीन व्यक्तियों
अपने पास से हटाओ तब हम आयेंगे। क़ुरआन ने कहा :–

'जो लोग सुबह-शाम अपने रब को उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने
के लिए पुकारते हैं, उन्हें अपने पास से न हटाना।'

—अनआम ५२

जिसके पास अल्लाह की बंदगी और उसकी प्रसन्नता की दौलत हो,

उसे किसी और दौलत की क्या आवश्यकता है। उसके लिए यही सम्म
काफ़ी है, ऐसा व्यक्ति रसूल के संग रहने का अधिकारी है।

खुदा और उसके बंदों के मुक़ाबले में घमंड दिखाना बहुत खतरन
बीमारी है और अनेकों बुराइयों की जड़ है, यह इंसान की दुनिया अं
आख़िरत दोनों को तबाह करने वाली है। प्यारे नबी सल्ल० का कथन है

'जिस व्यक्ति के हृदय में तनिक भी अहंकार होगा वह स्वर्ग में प्रवेश नहीं पा सकेगा। इस पर एक व्यक्ति ने कहा कि मनुष्य चाहता है कि उसके कपड़े सुन्दर हों, जूते अच्छे हों, (क्या यह अहंकार है ?) आप सल्ल० ने फ़रमाया, अल्लाह स्वयं मनोरम है, मनोरमता को पसंद करता है। अहंकार तो यह है कि कोई सत्य के मुक़ाबले में दुस्साहस दिखाये और लोगों को हीन समझे।'

—मुस्लिम

एक अन्य हदीस में है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया :–

'अल्लाह फ़रमाता है, 'गर्व मेरी चादर है और बड़ाई मेरा नीचे का परिधान, तो जिस किसी ने इन में से किसी को मुझ से छीनना चाहा मैं उसे नरक में फेंक दूंगा।'

—मुस्लिम

गर्व और बड़ाई अल्लाह ही के लिए है। मनुष्य को, जो अप
ज़िंदगी और अपनी हर ज़रूरत के लिए अल्लाह पर आश्रित है, गर्व शो
नहीं देता। अल्लाह के मुक़ाबले में अभिमान करना बन्दगी की सीमा
का उलंघन करना है और इसी तरह मनुष्यों में अभिमान मानवता के स्त
से गिरना है। मोमिन न तो अल्लाह के मुक़ाबले में अकड़ता है और न बं
के सामने वह इस बात को अच्छी तरह जानता है कि वास्तव में वह खा
हाथ और बिल्कुल बेबस है। उसके पास जो कुछ है वह अल्लाह का है अं
अल्लाह जब चाहे ये चीज़ें उस से छीन भी सकता है। अल्लाह की दी ह
इन नेमतों को पाकर अभिमान और घमंड करने का उसे कोई औचि
नहीं। ये चीज़ें तो केवल परीक्षा के लिए उसे दी गई हैं, अगर वह अहंक
और घमंड का मार्ग अपनायेगा तो वह अल्लाह की यातनाओं का अ
कारी होगा जो उसकी इज़्ज़त को मिट्टी में मिला देंगी।

मोमिन का हाल तो यह होता है कि उसे जितना अधिक दौलत अं
अधिकार प्राप्त होता है वह उतना ही अधिक अल्लाह के आगे झुकता
और मनुष्यों के साथ सज्जनता और नम्रता का व्यवहार करता है। उस
व्यवहार दिखावे का नहीं बल्कि वास्तविक होता है। इस से वह अल्ल

र मनुष्यों की नज़र में उच्च स्थान प्राप्त कर लेता है। प्यारे नबी ल० का कथन है :—

'सदक़ा करने से माल कम नहीं होता। क्षमा करने से अल्लाह बंदे की इज्ज़त ही बढ़ाता है और जो अल्लाह के लिए नम्र होता है, अल्लाह उसे उच्च स्थान प्रदान करता है।' —मुस्लिम

दु स्वभाव

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा मृदु स्वभाव क़ुरआन मजीद में है :—

'(हे रसूल सल्ल० !) यह अल्लाह की दयालुता है कि तुम इन लोगों के लिए बहुत ही नर्म हो, यदि तुम स्वभाव के क्रूर और कठोर हृदय वाले होते तो ये तुम्हारे पास से भाग जाते।'

—आले इम्रान १५९

क्रूर स्वभाव जब रसूल के लिए अशोभनीय है तो किसी और के र यह कैसे शोभा दे सकता है। एक और हदीस में है :—

'अल्लाह मृदु स्वभाव वाला है, वह मृदुता को पसन्द करता है और मृदु स्वभाव पर वह कुछ देता है जो क्रूर स्वभाव पर या अन्य किसी आदत पर नहीं देता।' —मुस्लिम

अल्लाह जैसा तेजस्वी और शक्तिशाली जब मृदु स्वभाव का है तो के बेबस बन्दों को क्रूरता कैसे शोभा दे सकती है। एक अन्य हदीस है :—

'जो नर्मी और मृदुता से वंचित है, वह भलाई से वंचित है।'

—मुस्लिम

माशीलता

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और बुनियादी शिक्षा गुस्से पर पाना और लोगों की ग़लतियों को माफ़ कर देना है। क़ुरआन मजीद जन्नत वालों का उल्लेख करते हुए फ़रमाया :—

'ये वह लोग हैं जो कुशादगी और तंगी प्रत्येक अवस्था में (अल्लाह की राह में) ख़र्च करते हैं। गुस्से को पीते हैं और लोगों को माफ़ कर देते हैं और अल्लाह उत्तमकारों से प्रेम करता है।'

—आले इम्रान १३४

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना, गुस्से पर क़ाबू रखना और क्षमा देना ये ऐसे गुण हैं जो इंसान को स्वर्ग का अधिकारी बना देते हैं।

क़ुरआन में एक जगह पर रसूल सल्ल० को और आपके वास्ते से पूरी उम्मत को सम्बोधित करते हुए फ़रमाया :–

> 'नर्मी और क्षमा से काम लो, भले काम का आदेश दो और अज्ञानी लोगों से न उलझो और अगर शैतान की कोई उकसाहट तुम्हें उकसाये, तो अल्लाह की पनाह मांगो। निस्सन्देह वह सुनने वाला और जानने वाला है।' —आराफ़, १९९-२००

अर्थात गुस्सा शैतान का हथियार है, इस से बचो, उत्तेजना से बचो विरोधियों को क्षमा कर दो, यही नहीं हम से कहा गया है कि हम दुर्व्यवहार के जवाब में सद्व्यवहार करें। हम बुराई का बदला भलाई से दें :–

> 'बराबर हो ही नहीं सकती भलाई और बुराई। तुम बुराई का जवाब भलाई से दो। फिर तुम क्या देखोगे कि तुम्हारे और जिस के बीच बैर था (वह ऐसा हो जाएगा) मानो वह कोई आत्मीय मित्र है।' —हा मीम सज्दा ३४

गुस्सा इंसान की कमज़ोरी है, गुस्से में इन्सान को अपने ऊपर नियंत्रण बाक़ी नहीं रहता। उसकी अक़्ल मारी जाती है, वह ऐसी-ऐसी बात और हरकतें कर बैठता है कि अगर वह होश में होता तो कभी न करता यह एक सत्य है कि दुनिया और आख़िरत दोनों को तबाह और बर्बाद कर देने वाली दुखद घटनाएं प्रायः क्रोध ही की हालत में घटित होती हैं, इस लिए गुस्से पर क़ाबू रखना अत्यन्त आवश्यक है। हदीस में है :—

> 'हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से कहा, 'मुझे नसीहत कीजिये।' आप सल्ल० ने फ़रमाया, 'गुस्सा न करो।' उस ने बार-बार नसीहत करने का आग्रह किया और आप सल्ल० ने हर बार यही कहा, 'गुस्सा न करो।'
>
> —बुख़ारी

गुस्सा पी जाना कमज़ोरी की नहीं, ताक़त और बहादुरी की बात है। प्यारे नबी सल्ल० का कथन है :–

> 'ताक़तवर वह नहीं है जो लोगों को पछाड़ दे, बल्कि ताक़तवर तो बस वह है जो गुस्से की हालत में अपने पर क़ाबू रखता है।'
>
> –बुख़ारी, मुस्लिम

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने गुस्से पर क़ाबू पाने के उपाय भी बताएं हैं :—

गुस्सा शैतान की ओर से होता है और शैतान आग से पैदा हुआ

है और आग पानी से बुझाई जाती है, तो जब तुम में से किसी को गुस्सा आये तो वुज़ू कर ले।' —अबूदाऊद

एक अन्य हदीस में है :—

'जब तुम में से किसी को गुस्सा आये और वह खड़ा हुआ हो तो बैठ जाये। अगर इस प्रकार गुस्सा खत्म हो जाए तो ठीक है, वरना लेट जाए।' —तिर्मिज़ी, अहमद

कृतज्ञता दिखाना

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा कृतज्ञता दिखाना है। कृतज्ञता की बात यह है कि आदमी उसे पहचाने जिस ने उस पर उपकार किया हो, दिल से उसके उपकारों को स्वीकार करे और अपनी बात और व्यवहार से इस बात का सबूत दे कि उसे अपने ऊपर किये हुए उपकारों का एहसास है। मनुष्य और जगत का वास्तविक उपकारकर्ता केवल अल्लाह है। मनुष्य के पास उसकी ज़िंदगी, योग्यताएं, शक्तियां और साधनों के रूप में जो कुछ है, वह अल्लाह ही का दिया हुआ है। उस पर अल्लाह के इतने उपकार हैं कि उन्हें गिना भी नहीं जा सकता,। क़ुरआन मजीद में है :—

'अगर तुम अल्लाह के उपकारों को गिनना चाहो तो उन्हें पूरा गिन नहीं सकते।' —इब्राहीम ३४

मानवता, सज्जनता और कृतज्ञता का तक़ाज़ा है कि मनुष्य अपने वास्तविक उपकारकर्ता को पहचाने, उसका दिल उसके प्रति कृतज्ञता और प्रेम-भाव से भरा हुआ हो और वह उसकी प्रदान की हुई जीवन-निधि और समस्त साधनों को उसके रास्ते में लगा दे और उसी की इच्छानुसार इस्तेमाल करे, क्योंकि इंसान अल्लाह का कृतज्ञ बनने के लिए बस यही कुछ कर सकता है। उसके पास अल्लाह के महान उपकारों का बदला चुकाने के लिए अपना कुछ भी नहीं है और न अल्लाह को उसकी किसी चीज़ की आवश्यकता ही है।

सत्य धर्म की पहली शिक्षा भी यही उपकारकर्ता की पहचान और अल्लाह के प्रति कृतज्ञता का भाव है। क़ुरआन मजीद जो कि हिदायत की किताब है, उस का शुभारंभ इसी ईश-प्रशंसा और कृतज्ञता प्रकाशन से होता है :—

'प्रशंसा और कृतज्ञता अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब, अत्यन्त दयावान और कृपाशील है।' —फ़ातिहा १-२

सूरः फ़ातिहा जिसकी ये प्रारम्भिक आयतें हैं, नमाज़ की प्रत्येक रकअत में पढ़ी जाती है ताकि हमारा दिल अल्लाह की प्रशंसा और कृतज्ञता, उसकी बन्दगी और मुहब्बत के भाव से परिपूर्ण रहे और हम अपनी पूरी ज़िंदगी में उसके कृतज्ञ सेवक बन सकें। कृतज्ञता केवल दीन की प्रथम शिक्षा और दीन की बुनियाद ही नहीं बल्कि यही मूल दीन है। क़ुरआन मजीद में है :—

'और देखो, तुम्हारे रब ने बता दिया था कि अगर तुम कृतज्ञता दिखाओगे तो मैं तुम्हें और अधिक दूंगा और अगर अकृतज्ञ बनोगे तो फिर मेरी यातना बड़ी सख्त है।' —इब्राहीम ७

इस आयत में कृतज्ञता और अकृतज्ञता को उसके सीमित अर्थ में नहीं लिया गया है, बल्कि इनका प्रयोग व्यापक अर्थों में हुआ है। कृतज्ञता यह है कि हम अल्लाह की दी हुई ज़िंदगी और प्रदान किये हुए साधनों को उसकी इच्छानुसार इस्तेमाल करें और उसके दीन की पैरवी इस प्रकार करें जैसे कि उसका हक़ है। कृतघ्नता यह है कि अल्लाह के साथ किसी को शरीक किया जाए या उसकी दी हुई ज़िंदगी और साधनों को उसकी इच्छा के विरुद्ध इस्तेमाल किया जाए। इसी व्यापक अर्थ में मुसलमानों को कृतज्ञ बनने और कृतघ्नता से बचने का आदेश दिया गया है :—

'तुम मुझे याद रखो, मैं भी तुम्हें याद रखूंगा। तुम मेरे कृतज्ञ बनो, मेरे प्रति कृतघ्नता न दिखलाओ।' —बक़रः १५२

यह है अल्लाह की कृतज्ञता जो वास्तव में हमारा वास्तविक उपकारकर्ता है। एक मोमिन व्यक्ति जब भी अल्लाह की कोई नेमत पाता है दिल और ज़ुबान से उसका आभार व्यक्त करता है। इस सिलसिले की दुआएं और ज़िक्र हदीस की किताबों में मौजूद हैं। अल्लाह की दी हुई नेमतों से ही अल्लाह के बन्दे दूसरे बन्दों के साथ अच्छा सुलूक करते हैं। मानवता और कृतज्ञता की भावनाओं का तक़ाज़ा यह है कि आदमी अल्लाह का आभार स्वीकार करने के बाद ऐसे सभी उपकारकर्ताओं का कृतज्ञ हो और उनके उपकारों का बदला चुकाए जिन्होंने उस पर एहसान किया हो। एक हदीस में है :—

'जो व्यक्ति इंसानों के उपकारों का शुक्रिया अदा नहीं करता, वह अल्लाह का शुक्र भी अदा नहीं कर सकेगा।' तिर्मिज़ी

इंसानों में सब से ज्यादा उपकार मां-बाप के होते हैं, इसीलिए अल्लाह ने अपना शुक्र अदा करने के साथ मां-बाप का शुक्र अदा करने का आदेश दिया :—

'मेरा शुक्र अदा करो और अपनें मां-बाप का भी।'

—लुक़मान १४

ब्र

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और मौलिक शिक्षा सब्र (धैर्य) । आमतौर से लोग मजबूरी का नाम सब्र समझते हैं लेकिन अरबी भाषा ौर क़ुरआन और हदीस में बहादुरी, साहस और दृढ़विश्वास को सब्र कहा या है :–

'(हज़रत लुक़मान नें कहा) हे मेरे बेटे ! नमाज़ क़ायम कर, भलाई का आदेश दे और बुराई से रोक और (इस राह में) जो मुसीबतें भी तुझ पर पड़ें उन पर सब्र कर, निश्चय ही ये बड़े साहस के काम हैं।'

—लुक़मान १७

सब्र नाम है इस बात का कि आदमी कठिनाइयों और परेशानियों ा मुक़ाबला करे। परिस्थितियों के आगे झुकने के बजाए उन का रुख ोड़नें की कोशिश करे। गम्भीर से गम्भीर हालतों में भी सत्य पर जमा हे, किसी भी खतरे को ध्यान में न लाये, वह बड़े से बड़े नुक़सान, यहां क कि जान, माल और औलाद के नुक़सान को भी सहन कर ले, परन्तु त्य से सम्बन्ध तोड़ने का नाम न ले, निराशा, बद-दिली, भय, घबराहट, ुझलाहट, दुस्साहस, निस्साहस, गुस्सा और आलस्य को निकट भी न आनें । वह सत्य मार्ग पर निरन्तर प्रयत्नशील रहे, यहां तक कि वह अपने रब ो बन्दगी और वफ़ादारी करता हुआ अपनें रब से जा मिले।

सब्र की इस व्याख्या से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव-चरित्र निर्माण में इसका कितना महत्व है। वास्तव में इस गुण के बग़ैर दृढ़ रित्र की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सत्य मार्ग पर चलनें के लिए ो इस गुण का होना और भी ज़्यादा आवश्यक है, क्योंकि सत्य की राह ांटों से भरी है। इस राह में जीवन की अन्तिम सांस तक अपनें मन से, तान से, भ्रष्ट सम्बन्धियों और बिगड़े हुए समाज से, समय के शासकों से, न सभी से सख्त मुक़ाबला रहता है। इस राह में बड़े-बड़े खतरे आते हैं ौर जान, माल, औलाद, इज़्ज़त हर चीज़ को दांव पर लगाना पड़ता है। ल्लाह का नियम भी यह है कि वह ईमान वालों को मुसीबतों और कठि-ाइयों में डाल कर आज़माता है और उन्हीं को उपासना और बन्दगी की पाधि देता है और अपनी रहमत, मदद और हिदायत प्रदान करता है, जो ब्र करते और सत्य मार्ग पर जमे रहते हैं, क़ुरआन मजीद में है :—

'हम तुम्हें अवश्य आज़मायेंगे कुछ भय से, भूख से, माल, जान और पैदावार के नुक़सान से और (हे नबी!) सब्र करने वालों को शुभ सूचना दो। ये वे लोग हैं कि जब इन्हें कोई मुसीबत पहुंचती है तो कहते हैं, हम अल्लाह के हैं और हमें अल्लाह ही की ओर पलट कर जाना है। यही लोग हैं जिन पर अल्लाह की रहमतें और बरकतें हैं और यही लोग सत्य-मार्ग पर हैं।'

—बक़रः १५५-१५७

जन्नत के अधिकारी वही लोग होंगे जो सत्य के लिए निरन्तर प्रय करें और हर तरह की मुसीबतों और कठिनाइयों का मुक़ाबला करते सत्य पर डटे रहें, यहाँ तक कि मौत के मुंह में भी जाने को तैयार ह क़ुरआन मजीद म है :—

'क्या तुम्हारा ख्याल है कि तुम जन्नत में (आसानी से) दाखिल हो जाओगे, हालांकि अभी अल्लाह ने यह देखा ही नहीं कि तुम में कौन से लोग (उसकी राह में) जिहाद करने वाले हैं और कौन (मुसीबतों और कठिनाइयों में) सब्र करने वाले हैं, तुम तो मौत की उसके सामने आने से पहले तक कामना कर रहे थे तो लो वह तुम्हारे सामने आ भी गई और तुम ने उसे आंखों से देख लिया।'

—आले इम्रान १४२-१४३

अल्लाह की याद और सब्र (धैर्य) यही दो ताक़ते हैं, जिनके सह एक मोमिन सत्य-मार्ग की कठिन घाटियों को पार करता है और अल्ल की सहायता और मदद का अधिकारी होकर उसके दीन को दुनिया प्रभुत्वशाली बनाने में सफल होता है :—

'हे ईमान लाने वालो! सब्र और नमाज़ से मदद लो, निस्संदेह अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।' बक़रः १५३

यही बात हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की ज़ुबान से क़ुरआन मज में इस प्रकार कहलवाई गई है :—

'मूसा ने अपनी क़ौम से कहा, अल्लाह से मदद लो और सब्र से काम लो। ज़मीन अल्लाह ही की है, वह जिस को चाहता है अपने बन्दों में से उसका वारिस बना देता है और अन्तिम परिणाम तो उन्हीं लोगों के हक़ में है जो ख़ुदा से डरने वाले हैं।' —आराफ़, १२८

अर्थात ज़मीन अल्लाह के हाथ में है। वह अपने बन्दों में से जिस चाहता है, उसका वारिस और मालिक बना देता है, इसलिए उससे म

चाहो और उसके भेजे हुए सत्य धर्म पर जमे रहो। अगर तुम ने सब्र और अल्लाह से भय का रास्ता अपनाया तो परिणामस्वरूप ज़मीन का अधिशासन तुम्हारे हाथ में होगा।

मोमिन सब्र और शुक्र का मूर्त रूप होता है, इसलिए वह दुनिया और आख़िरत दोनों में सफल होता है। इस बात को नबी सल्ल० ने बड़े ही अच्छे ढंग में यों फ़रमाया है :—

> 'मोमिन का मामला बड़ा अद्‌भुत है, उसके लिए उसके हर मामले में भलाई ही भलाई है। उसे कोई नेमत मिलती है तो शुक्र करता है और यह उसके लिए भलाई ही की बात है। उस पर जब कोई मुसीबत पड़ती है तो वह सब्र करता है और यह भी उसके लिए भलाई ही है।' —मुस्लिम

अल्लाह के रास्ते में खर्च

इस्लाम की एक अन्य महत्वपूर्ण और बुनियादी शिक्षा अल्लाह के रास्ते में खर्च करने की है। अर्थात इंसान अल्लाह की दी हुई नेमतों को अल्लाह की राह में खर्च करे और अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए क़ुर्बानी दे।

क़ुर्बानी के बग़ैर हम किसी छोटे से छोटे उद्देश्य में सफल नहीं हो सकते। अगर यह बात सही है और वास्तव में सही है तो हम यह आशा किस तरह रखते हैं कि हक़ के लिए क़ुर्बानी दिये बग़ैर दुनिया में सम्मान और सफलता तथा आख़िरत में हमेशा की कामियाबी प्राप्त कर सकते हैं। जब दुनिया में क़ुर्बानी के बग़ैर कोई भी क़ौम सम्मान और अधिकार प्राप्त नहीं कर सकती तो फिर हम यह चीज़ बग़ैर क़ुर्बानी के कैसे पा सकते हैं। जब इस दुनिया की साधारण और अनित्य कामियाबी का यह हाल है तो फिर आख़िरत की सर्वश्रेष्ठ और हमेशा रहने वाली कामियाबी क़ुर्बानियों के बिना कैसे प्राप्त हो सकती है। जन्नत वास्तव में उन्हीं लोगों को मिलती है जो अपना सब कुछ खुशी-खुशी अल्लाह के हवाले कर दें। क़ुरआन मजीद में है :—

> 'अल्लाह ने ईमान वालों से उनकी जान और माल को ख़रीद लिया है, इस बदले में कि उनके लिए जन्नत है।' —तौबा १११

जो व्यक्ति अल्लाह की नेमतों का मालिक बन बैठे और अल्लाह की राह में उन्हें खर्च करने के बजाय जोड़-जोड़ कर रखे वह अल्लाह की खुशी और जन्नत नहीं पा सकता, क़ुरआन मजीद में है :–

'तबाही है हर उस व्यक्ति के लिए जो ऐब चुनता और चोटें करता, जिस ने धन जमा किया और उसे गिन-गिन कर रखा और समझता है कि उसका धन उसे अमर बना देगा।' —हुम्ज़: १-३

इंसान की गुमराही और चरित्रहीनता का बहुत बड़ा कारण दुनिया और उसके भौतिक लाभों और स्वादों पर रीझना और उनकी वासना में ग्रस्त रहना है। दुनिया का उपासक अल्लाह का उपासक नहीं बन सकता, आखिरत की सफलता उसका लक्ष्य नहीं हो सकती। वह अल्लाह और मनुष्यों के हक़ अदा करने में नाकाम रहेगा, वह तो अपनी असम्मानित और अपवित्र दुनिया बनाने के लिए अपराध पर अपराध करता चला जायेगा और कितने ही इंसानों की दुनिया उजाड़ कर रख देगा। अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

'तंगदिली से बचो क्योंकि यही तंगदिली है जिस ने तुम से पहले के लोगों को हलाक किया, उन्हें तैयार किया कि वे लोगों का खून बहायें और उनकी चीज़ों को अपने लिए हलाल कर लें जब कि वे उनके लिए हराम थीं।' —मुस्लिम

अल्लाह की राह में दुनिया और उसके फ़ायदों और लज्ज़तों को क़ुर्बान किये बिना न तो इंसान की आत्मा शुद्ध हो सकती है और न वह दो क़दम भी दीन के मार्ग पर चल सकता है। क़ुरआन मजीद ने पहले ही स्पष्ट कर दिया कि इस से वही लोग हिदायत पायेंगे जो अल्लाह की बंदगी करने और उसको प्रदान की हुई चीज़ों को उस की राह में खर्च करने के लिए तैयार हों :—

'अलिफ़, लाम, मीम, यह (अल्लाह की) किताब है। इसमें कोई सन्देह नहीं, उन लोगों के लिए मार्ग-दर्शन है जो अल्लाह का डर रखते हैं, जो बिना देखे ईमान लाते, नमाज़ क़ायम करते और जो कुछ हमने दिया है, उसमें से (हमारी राह में) खर्च करते हैं।'

—बक़र: १-३

अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

'हे आदम के बेटे! जो ज़रूरत से अधिक हो, उस माल को खर्च कर यही तेरे लिए अच्छा है, बचा कर रखेगा तो तेरे लिए बुरा होगा। आवश्यकतानुसार रखने पर मलामत नहीं और उन पर पहले खर्च कर जिन का तू ज़िम्मेदार है।' —मुस्लिम

आमतौर से ख्याल किया जाता है कि जो व्यक्ति धनवान है वही

कामियाब हैं। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने इस विचार के विरुद्ध मत प्रकट किया है। उनके कथनानुसार पूंजीपति घाटे और नुक़सान में हैं, इस से उन में केवल वही लोग बच सकते हैं, जो अल्लाह की राह में दिल खोल कर खर्च करें :—

'अबू ज़र रज़ि० से रिवायत है, उन्होंनें कहा कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास पहुंचा उस समय आप सल्ल० काबे की छांव में बैठे थे। जब आप सल्ल० ने मुझे देखा तो फ़रमाया, काबे के रब की क़सम ! वही लोग बड़ी हानि में हैं। मैंने पूछा, मेरे मां-बाप आप पर निछावर हों, वे लोग कौन हैं ? आप सल्ल० ने फ़रमाया, जो ज़्यादा दौलत वाले हैं। सिवाए उनके जो इस तरह, इस तरह, इस तरह, आगे-पीछे, दायें-बायें खर्च करें और ऐसे लोग कम ही हैं।' —बुखारी, मुस्लिम

ज़ुबान की रक्षा

ज़ुबान से जितने ज़्यादा पाप होते हैं उतने शायद ही किसी और अंग से होते हों और ज़ुबान के ग़लत, अनुचित और ग़ैर ज़िम्मेदाराना इस्तेमाल से अनगिनत उपद्रव पैदा होते हैं। अगर आप झगड़ों और युद्धों का मूल कारण मालूम करने की कोशिश करें तो आपको पता चलेगा कि आम-तौर से इनका कारण ज़ुबान का अनुचित प्रयोग ही है और फिर ज़्यादा बोलनें और बकवास करने से इंसान का चरित्र भी बिगड़ता है, ऐसा व्यक्ति सोच-समझ कर कोई काम करने की शक्ति भी खो देता है और वह अपने कर्तव्यों के एहसास तथा अच्छे चरित्र से भी वंचित रहता है, यही कारण है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें ज़ुबान पर नियंत्रण की बड़ी ताकीद की है :—

'जो व्यक्ति अल्लाह और आखिरत को मानता हो उसे भली बात कहनी चाहिए, नहीं तो चुप ही रहना चाहिए।'

—बुखारी, मुस्लिम

इस हदीस में अधिक बोलनें से मना किया गया है और इसके मुक़ाबले में चुप रहने की ताकीद की गई है। एक अन्य हदीस में है :—

बन्दा अल्लाह की प्रसन्नता की कोई बात कह देता है और उस के ध्यान में उसका महत्व भी नहीं होता किन्तु इसके द्वारा अल्लाह उसके दर्जे बुलन्द कर देता है। कभी ऐसा होता है कि बन्दा अल्लाह की नाराज़ी की कोई बात मुंह से निकाल देता है और

उसके ध्यान में उसकी गम्भीरता नहीं होती लेकिन उसके कारण वह नरक में जा गिरता है।' —बुखारी

ज़ुबान का इस्तेमाल कितना लाभ-प्रद और कितना खतरनाक है। एक और हदीस में है :—

'अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, जानते हो, जन्नत में सबसे ज़्यादा जिसके कारण लोग जायेंगे वह क्या है ? वह अल्लाह का डर रखना और सुशीलता है। जानते हो नरक में सबसे ज़्यादा किस वजह से लोग जाएंगे? मुंह और गुप्त अंग के ग़लत इस्तेमाल की वजह से।'

—तिर्मिज़ी, इब्नेमाजा

एक दूसरी हदीस में है कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया :—

'जो व्यक्ति मुझे ज़मानत दे उसकी जो दो जबड़ों के बीच है (अर्थात ज़ुबान) और जो दो पैरों के बीच है, (अर्थात गुप्त अंग) मैं उसे जन्नत की ज़मानत देता हूं।' —बुख़ारी

इन दोनों हदीसों से स्पष्ट होता है कि ज़ुबान और गुप्त अंग पर नियंत्रण न केवल इन्सान को असंख्य पापों से बचाता है, बल्कि वह उसे चरित्र बल भी देता है जिसके कारण वह जन्नत का अधिकारी बन जाता है। इसके विपरीत इन दोनों अंगों का अनुचित प्रयोग केवल यही नहीं कि परोक्ष निन्दा, झूठ, तिरस्कार, चुग़ली, दोषारोपण, गाली-गलौज, लानत, किसी को नाहक़ काफ़िर कहना, मज़ाक़ उड़ाना, व्यभिचार, समलिंग-कामुकता आदि बड़े गुनाहों का कारण बनता है, बल्कि इसकी वजह से मनुष्य चरित्रहीन और दुष्चरित्र बन जाता है और उसका ठिकाना नरक के अलावा कुछ नहीं होता।

✱

घर का सुधार

इन्सान के बाल-बच्चे उसकी सबसे प्रिय पूंजी हैं। दुनिया में उस
ो बड़ी इच्छा यह होती है कि उसके अपने लोग फलें फूलें, वह दुख
ठाता है ताकि ये सुख पायें, वह दिन रात दौड़-धूप करता है ताकि उन्हें
ाराम और सुख मिले, वह अपनी ज़िन्दगी की शक्तियां निचोड़ देता है
ाकि उसके घर के लोगों को ज़िन्दगी की सफलताएं प्राप्त हों। वह अपना
ाल, अपना समय और अपनी जान को निस्संकोच उन पर निछावर कर
ता है और क्यों न करे, उसे इनसे बहुत प्यार होता है।

यह बात अगर सही है, और निस्संदेह यह सही है, तो फिर यह बात
ी सही है कि एक मोमिन अपने घर वालों को छोड़कर अकेला सत्य धर्म
र नहीं चल सकता वह स्वभावतः इस बात की कोशिश करने पर विवश है
ि उसके घर के लोग भी अल्लाह के सच्चे बंदे बन जाएं। जिस दीन को
सने हक़ और दुनिया और आख़िरत की सफलताओं का ज़ामिन समझा
उसे वे भी अपना लें। जिस अल्लाह को प्रसन्न करने में वह सुबह शाम
गा हुआ है उसे प्रसन्न करने में वे भी लग जाएं ताकि उन्हें भी अल्लाह
ी रहमतें प्राप्त हो सकें। जिस नरक से बचने की वह रात दिन चिन्ता
रता है उससे वे भी दूर रहें और जिस जन्नत का वह प्रेमी है उसके वे
ी प्रेमी बनें ताकि जब अल्लाह की अदालत से उसे जन्नत की खुशखबरी
मले तो साथ ही उसके घर वालों को भी मिले और वे सब एक साथ
न्नत की नित्य और अपार नैमतों से प्रसन्न हो सकें। वह अपने रब से
ार-बार यह दुआ करता है :-

'हे हमारे रब ! हमारी पत्नियों और सन्तान को हमारी आंखों
की ठंडक बना और हमें परहेज़गारों का नायक कर दे।'

—फ़ुरक़ान ७४

अर्थात हमारे घर के लोग दीन के सच्चे अनुयायी हों और हक़ के सच्चे प्रेमी हों। उनकी नेकी और धर्मपरायणता से हमारी आंख ठंडी हों। हमारा घर अल्लाह से डरने वालों का घर हो जिसके हम सर बराह हैं। क़ुरआन मजीद में घर वालों के सुधार पर इस प्रकार ज़ोर दिया गया है:—

> 'हे ईमान वालो! अपने आपको और अपने घर वालों को (नरक की) आग से बचाओ जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर हैं। जिस पर ऐसे फ़रिश्ते नियुक्त हैं जो कठोर और प्रबल हैं। अल्लाह ने उन्हें जो आदेश दिया है उसके विरुद्ध नहीं करते और जो आदेश मिलता है उसे करते हैं।' —तहरीम ६

इस आयत से विदित होता है कि अपने सुधार के साथ घर के लोगों के सुधार की कोशिश भी एक मोमिन की ज़िम्मेदारी है। अगर उस की अपनी कोताही के कारण उसके घर के लोग बिगड़े और नरक की यातना के पात्र हुए तो उसे इसका उत्तर ख़ुदा को अवश्य देना होगा एक हदीस में हैं—

> 'तुममें से प्रत्येक व्यक्ति ज़िम्मेदार है और तुम में के प्रत्येक से उन लोगों के बारे में पूछा जाएगा जिनकी ज़िम्मेदारी उस पर आती है। अतः पुरुष अपने घर वालों का ज़िम्मेदार है और उससे उनके बारे में सवाल होगा और स्त्री अपने पति के घर और उस की औलाद की संरक्षिका है और उससे उनके सम्बन्ध में पूछ-गछ होगी।' —बुख़ारी, मुस्लिम

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने नबी के पद पर आसीन होने के बाद सबसे पहले अपनी धर्मपत्नी ख़दीजा रज़ि० को अपने नबी होने की ख़बर सुनाई और न केवल यह कि वे तुरन्त ईमान ले आईं बल्कि साहचर्य, अपनी सूझबूझ और अपनी धन-सम्पत्ति के द्वारा आप सल्ल० के लिए सबसे अच्छा सहारा भी सिद्ध हुईं। आप सल्ल० की सभी सुपुत्रियों ने भी आप सल्ल० पर विश्वास किया और इस्लाम की अच्छी अनुयायिनी सिद्ध हुईं।

जिस समय अल्लाह की तरफ़ से आप सल्ल० पर यह आयत उतरी कि—

> 'अपने निकटतम सम्बन्धियों को (अल्लाह की यातनाओं से) सावधान कर दो।'

तो आप सल्ल० ने तुरन्त इस कोशिश को आरम्भ कर दिया।

स में इसका विवरण इस प्रकार है :—

'हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि जब यह आयत 'अपने निकटतम सम्बन्धियों को (अल्लाह की यातनाओं से) सावधान करो।' अवतरित हुई तो आप सल्ल० ने क़ुरैश को बुलाया तो आम और खास सभी लोग जमा हुए। आप सल्ल० ने फ़रमाया, हे क़ुरैश के लोगो! अपने आपको बचाओ, मैं अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता! हे बनीअब्दे मनाफ़! मैं अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता। हे अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब! मैं अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता। हे सफ़िय्या, अल्लाह के रसूल की फूफी! मैं अल्लाह के मुकाबले में तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता। हे फ़ातिमा! मुहम्मद सल्ल० की बेटी! मेरे माल में से जो चाहे मुझसे मांग लो लेकिन मैं अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता।' —बुखारी, मुस्लिम

हज़रत खदीजा रज़ि० के देहान्त के बाद अल्लाह के रसूल सल्ल० ाई स्त्रियों से शादी की। ये सब सच्ची और ईमान वाली थीं और ान की सेवा और उसके अनुपालन में उसी प्रकार लगी हुई थीं जैसे सल्ल० ने उन्हें इसकी शिक्षा दी थी और इसके लिए तैयार किया था, बार ऐसा हुआ कि नबी सल्ल० को अपनी धर्मपत्नियों की एक ऐसी से जो उनको शोभा न देती थी, तक्लीफ़ हुई और आप सल्ल० कुछ ों के लिए उनसे अलग-थलग रहे। इस अवधि के बाद यह आयतें ीं—

'हे नबी! अपनी पत्नियों से कहो : यदि तुम सांसारिक जीवन और उसकी शोभा चाहती हो तो आओ! मैं तुम्हें कुछ दे-दिलाकर भली रीति से विदा कर दूं और अगर तुम अल्लाह और उसके रसूल और आखिरत के घर को चाहती हो तो निस्संदेह अल्लाह ने तुममें से उत्तमकार स्त्रियों के लिए बड़ा प्रतिदान तैयार कर रखा है। हे नबी की स्त्रियो! तुममें से जो कोई प्रत्यक्ष अश्लील कर्म करेगी उसे दोहरी यातना दी जाएगी और यह बात अल्लाह के लिए बहुत आसान है। और जो तुममें से अल्लाह और उस के रसूल का सादर आज्ञापालन करेगी और अनुकूल कर्म करेगी उसे हम दो गुना बदला देंगे और उसके लिए हमने इज़्ज़त की रोज़ी तैयार

कर रखी है। हे नबी की स्त्रियो ! तुम किसी आम औरत की तरह नहीं हो। अगर तुम परहेज़गार रहना चाहती हो तो नर्म और कोमल बात मत करना कि जिस किसी के दिल में रोग हो वह लालच में पड़ जाय। तुम तो दस्तूर के मुताबिक़ बात करो और अपने घरों में टिककर रहो और भूतपूर्व अज्ञानकाल की तरह सज-धज न दिखाती फिरो। नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो और (सारे मामलों में) अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म मानती रहो। हे इस घर के लोगो ! अल्लाह तो चाहता है कि तुमसे गन्दगी को दूर रखे और तुम्हें पूरी तरह पाक-साफ़ रखे और तुम्हारे घरों में अल्लाह की आयतें और हिकमत की जो बातें सुनाई जाती हैं उनकी चर्चा करो, निस्संदेह अल्लाह भेद वाला और खबर रखने वाला है।' —अहज़ाब २८-३४

नबी सल्ल० ने ये आयतें अपनी प्रत्येक धर्मपत्नी को सुनाई और सभी नें रसूल के साथ रहकर दीन की सेवा का अपना संकल्प प्रकट किया और बाद के ज़माने नें यह अच्छी तरह बता दिया कि नबी सल्ल० की धर्म पत्नियों ने दीन को समझने, उसे ग्रहण करने, उस पर चलने और उसे स्पष्ट करनें का हक़ अदा कर दिया है।

ये आयतें बताती हैं कि एक मोमिन के घर की औरतों को कैसा होना चाहिए ? क्योंकि अल्लाह के रसूल सल्ल० की पत्नियां सारी मुस्लिम स्त्रियों के लिए आदर्श हैं और अल्लाह ने उनको जो प्रोग्राम दिया है वह वास्तव में सभी मुस्लिम स्त्रियों के प्रोग्राम हैं, इसीलिए इन आयतों के बाद ही सच्चे मोमिन मर्दों और सच्ची मोमिन स्त्रियों के गुणों का उल्लेख किया गया है। अल्लाह कहता है—

'इस्लाम लाने वाले पुरुष और इस्लाम लानें वाली स्त्रियां, ईमान वाले पुरुष और ईमान वाली स्त्रियां (अल्लाह के) आज्ञाकारी पुरुष और आज्ञाकारी स्त्रियां, सत्यवादी पुरुष और सत्यवादिनी स्त्रियां, सब्र करने वाले पुरुष और सब्र करने वाली स्त्रियां, (अल्लाह के आगे) विनम्रता प्रकट करने वाले पुरुष और विनम्रता प्रकट करने वाली स्त्रियां, सदक़ा देने वाले पुरुष और सदक़ा देनें वाली स्त्रियां, रोज़ा रखने वाले पुरुष और रोज़ा रखनें वाली स्त्रियां, अपनी शर्मगाहों (गुप्तेन्द्रियों) की रक्षा करनें वाले पुरुष और रक्षा करने वाली स्त्रियां

और अल्लाह का अधिक स्मरण करने वाले पुरुष और स्मरण करने वाली स्त्रियां निश्चय ही इन सब के लिए अल्लाह ने क्षमा और बड़ा बदला तैयार कर रखा है।'
—अहज़ाब ३५

इन आयतों से यह भी विदित होता है कि दीन के मामले में औरतों को मर्दों से पीछे नहीं रहना चाहिए। ये आयतें यह भी बताती हैं कि ईमान वाले अपने घर की औरतों, लड़कियों और लड़कों को किन गुणों से सुसज्जित करें और किस ढंग पर उन्हें तैयार करें।

औलाद का प्रशिक्षण किन रेखाओं पर किया जाए इसका सबसे अच्छा नमूना हज़रत लुक़मान की नसीहत है जो उन्होंने अपने बेटे को की, जिसका उल्लेख क़ुरआन मजीद में मिलता है—

'देखो लुक़मान ने अपने बेटे से नसीहत करते हुए कहा, हे मेरे बेटे! अल्लाह के साथ शिर्क मत करना निश्चय ही शिर्क बहुत बड़ा ज़ुल्म है—और हमने मनुष्य को उसके माता-पिता के बारे में ताकीद की, उसकी माता ने निढाल पर निढाल हो कर उसे पेट में रखा और उसका दूध छूटता है दो साल में (यह ताकीद की कि) मेरा और अपने माता पिता का कृतज्ञ हो मेरे ही पास तो लौट कर आना है परन्तु यदि वे तुझ पर दबाव डालें कि तू किसी को मेरा सहभागी ठहराए जिसका तुझे कुछ भी ज्ञान नहीं तो उनका कहना न मानना लेकिन दुनिया में उनके संग भले तरीक़े से रहना और चलना उस व्यक्ति के रास्ते पर जो मेरे आगे झुका हुआ हो, आख़िरकार तुम सबको मेरे ही पास आना है, तो मैं तुम्हें बताऊंगा कि तुम क्या करते रहे थे—(लुक़मान ने कहा) हे मेरे बेटे! यदि राई के दाने के बराबर भी कोई बात किसी चट्टान के बीच या आसमानों में या ज़मीन में कहीं भी हो अल्लाह उसे सामने लाकर रहेगा। निस्संदेह अल्लाह बड़ा भेद वाला और पूरी ख़बर रखने वाला है। हे मेरे बेटे! नमाज़ का आयोजन कर, और भलाई के लिए कह, बुराई से रोक और जो मुसीबत भी तुझ पर पड़े उस पर सब्र कर, निश्चय ही यह ठान लेने का काम है। अपना गाल लोगों के सामने से न फेर और न धरती पर अकड़कर चल, निःसंदेह अल्लाह डींग मारने वालों, इतराने वालों को पसन्द नहीं करता। अपनी चाल को संतुलित रख और अपनी आवाज़ को धीमी रख, सबसे बुरी आवाज़ तो गधे की होती है।'
—लुक़मान १३-१९

इस्लाम का सन्देश

इन्सान जिस चीज़ को सत्य और कल्याणकारी समझता है स्वभावतः उसकी कोशिश होती है कि दूसरे भी उसे सत्य और कल्याणकारी समझें। एक व्यक्ति को जिस क्षण भी इस बात का विश्वास हो जाता है कि इस्लाम ही सत्य धर्म है और दुनिया और आख़िरत दोनों की सफलताओं की गारण्टी देता है। (ऐसे ही व्यक्ति को मुसलमान कहते हैं) तो वह बेचैन हो जाता है और अपने नातेदारों, दोस्तों और परिचित लोगों में इस्लाम का परिचय कराने के लिए उठ खड़ा होता है। वह एक-एक व्यक्ति के पास पहुंचता और इस्लाम के बारे में उससे बातचीत करता है। यदि उसे अपनी कोशिश में सफलता मिलती है तो वह अत्यन्त प्रसन्न होता है और असफल होता है तो उसे बहुत दुख होता है मानो कोई प्यारी चीज़ उससे छिन गई हो।

हम देखते हैं कि नबी सल्ल० के ज़माने में इस्लाम क़ुबूल करते ही प्रत्येक व्यक्ति इस्लाम का प्रचारक बन जाता था। शुरू में स्थिति इतनी गंभीर थी कि खुलकर नमाज़ पढ़ने तक की गुंजाइश न थी और इस्लाम क़ुबूल करने के मायने यह थे कि आदमी अपने आपको ख़तरों के हवाले कर रहा है। परन्तु इसके बावजूद जो लोग भी हक़ को क़ुबूल करते थे, वे दीन की दावत को पहुंचाने के ख़तरे के काम में लग जाते थे क्योंकि उनका ईमान और विश्वास उन्हें बेचैन कर देता था।

प्यारे नबी सल्ल० दिन रात दीन की दावत के काम में लगे रहते मगर जब लोग आप सल्ल० की दावत को क़ुबूल करने के बजाए उसका मज़ाक उड़ाते तो आपका दिल बैठने लगता—

'अगर ये लोग इस दावत पर ईमान न लाए तो तुम कुढ़-कुढ़ कर शायद अपने आपको हलाक कर डालोगे।' —क़ह्फ़ ६

मोमिन इंसानों के लिए बड़ी दया और करुणा रखता है, वह दुखी इन्सानों को देखकर तड़प उठता है और कोशिश करता है कि उनके दुख-दर्द को दूर कर दे। यह उसका स्वभाव है और यही उसके दीन, इस्लाम की शिक्षा भी है। मोमिन अपनी आँखों से देखता है कि अनेकों मनुष्य ज़ुल्म, फ़साद, बुराई, कुफ्र, शिर्क और नास्तिकता सरीखे तबाह कर देने वाले रास्ते पर लगे हुए हैं, वे नरक की भीषण यातनाओं की तरफ़ निर्बाध दौड़े चले जा रहे हैं और यही नहीं, वे अपने दुष्चरित्र के कारण दुनिया में भी ईश-प्रकोप के पात्र बन चुके हैं। यह सब देखकर वह तड़प उठता है और इसकी वजह से उसकी रात की नींद और दिन का चैन जाता रहता है। वह एक-एक इन्सान को पकड़कर उसे अल्लाह की दुखदायनी यातनाओं से बचाने की कोशिश करता है। इंसान के लिए इससे बड़ी मुसीबत क्या हो सकती है कि वह दुनिया और आख़िरत में अल्लाह के प्रकोप और उसकी भीषण यातना का पात्र हो जाए और इन्सान की इससे बड़ी सेवा क्या हो सकती है कि उसकी दुनिया और आख़िरत को तबाही से बचा लिया जाय। हदीस में है—

> 'मेरी मिसाल ऐसी है कि जैसे किसी व्यक्ति ने आग जलाई तो जब आग से आस-पास का इलाक़ा रोशन हो गया तो परवाने और वे कीड़े-मकोड़े जो आग में गिरते हैं, गिरने लगे। वह उन्हें रोकता परन्तु वे उसे हरा कर आग में घुस पड़ते। अब मैं हूं कि तुम्हारी कमर पकड़ कर तुम्हें आग से बचा रहा हूं, मगर तुम हो कि (नरक की) आग में गिरे पड़ते हो।' —बुख़ारी, मुस्लिम

इस हदीस में नबी सल्ल० ने सत्य का आह्वान करने वाले एक सच्चे इंसान की भावनाओं और उसके प्रयासों की और लोगों की अज्ञानता और नादानी की कितनी अच्छी तस्वीर खींची है।

लेकिन बात केवल इतनी ही नहीं है, बल्कि हक़ीक़त यह है कि अल्लाह ने जब भी किसी क़ौम को अपनी किताब प्रदान की और उसे सीधे रास्ते का ज्ञान दिया तो उसके साथ ही उस से इस बात का वचन भी लिया कि वह अल्लाह की किताब की शिक्षाओं को इंसानों तक पहुंचाए और उन्हें छिपाए नहीं। क़ुरआन मजीद ने किताब वालों का वर्णन करते हुए कहा है:—

> 'और देखो जिन्हें किताब दी गई थी उन से अल्लाह ने यह दृढ़ वचन लिया था कि तुम इस किताब (की शिक्षाओं) को लोगों के सामने बयान करोगे और उसे छिपाओगे नहीं, तो उन्होंने उसे अपने पीछे डाल दिया, उसे थोड़ी क़ीमत पर बेच डाला। कितनी

बुरी है वह चीज़ जिसके बदले उन्होंने (अल्लाह की किताब का) सौदा किया।'
—आले इम्‌रान, ८७

मुसलमानों से किताब वालों (यहूदी और ईसाई) के प्रतिज्ञा भंग करने का उल्लेख इसलिए किया कि कहीं मुसलमान भी इसी नीति को न अपना लें और अल्लाह की किताब की शिक्षाओं और उसके दीन की दावत को दूसरे इंसानों तक पहुंचाने में कोताही करने लगें। मुस्लिम समुदाय के कर्तव्यों को बयान करते हुए क़ुरआन मजीद ने कहा :—

'और तुम्हें ऐसा गिरोह होना चाहिए जो भलाई (इस्लाम) की ओर बुलाए, नेकी के लिए कहे और बुराई से रोके और ऐसे ही लोग (दुनिया और आख़िरत में) सफल और पूर्ण कामियाब हैं।'
—आले इम्‌रान, १०४

इस आयत से दो बातें स्पष्ट होती हैं, एक यह कि मुस्लिम समुदाय को इसीलिए निर्मित किया गया है कि वह इंसानों को इस्लाम की तरफ़ बुलाए, नेकी और भलाई के लिए कहे और बुराई से रोके। दूसरी बात यह मालूम हुई कि इन कामों को करने के बाद ही मुसलमान दुनिया और आख़िरत में कामियाब हो सकते हैं।

प्यारे नबी सल्ल० का कथन है :—

'जो लोग मौजूद हैं वे उन लोगों तक मेरा सन्देश पहुंचा दें जो इस समय मौजूद नहीं हैं।'

इस हदीस से मालूम हुआ जिस इंसान तक अल्लाह के रसूल सल्ल० का संदेश पहुंचा हो और उस ने सत्य धर्म पा लिया हो उसका कर्तव्य होता है कि वह दूसरे इंसानों तक इस पैग़ाम को पहुंचाए।

एक अन्य हदीस में है :—

'मेरी बात दूसरों तक पहुंचाओ चाहे एक आयत ही क्यों न हो।'
—बुख़ारी

इस हदीस से स्पष्ट हुआ कि दीन का काम करने के लिए अधिक ज्ञान की आवश्यकता नहीं, अगर इन्सान को क़ुरआन की एक आयत और इस्लाम का कोई एक ही हुक्म मालूम हो तो वह उसे दूसरों तक पहुंचा दे।

इस्लाम की ओर लोगों को बुलाने का कितना महत्व है और मुस्लिम समुदाय की इस सम्बन्ध में ज़िम्मेदारी कितनी बड़ी है, इसे कुछ विस्तार से समझना ज़रूरी है, क्योंकि अच्छे-अच्छे लोग इसे नहीं समझ पा रहे हैं।'

हम सब मुसलमान इस पर सहमत हैं कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० संसार के सभी इंसानों के लिए रसूल बना कर भेजे गये हैं—इसे क़ुरआन

र हदीस ने इस तरह स्पष्ट कर दिया है कि इस में सन्देह की कोई गुंजा-
' ही नहीं है—इसी के साथ हमारा ईमान है कि आप सल्ल० अल्लाह के
खिरी नबी हैं—और यह बात भी क़ुरआन और हदीस से निश्चित रूप
प्रावित है—दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि आप सल्ल० के
ो हो जाने के बाद से क़ियामत तक सारे इंसानों की सफलता और मुक्ति
प सल्ल० पर ईमान लाने और आप का दीन अपनाने ही में है।

लेकिन यह एक हक़ीक़त है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० अपनी
दगी में केवल अरब के लोगों पर ही ध्यान दे सके। निस्संदेह आप सल्ल०
आस-पास के शासकों को अपने पत्रों और अपने दूतों द्वारा इस्लाम की
ात दी, परन्तु यह दावत आस-पास के कुछ शासकों तक ही सीमित
ी। दुनिया के अधिकतर शासक इस दावत से वंचित रहे और अरब के
हर के लोगों तक तो आप सल्ल० अपनी आवाज़ पहुंचा ही न सके। फिर
प सल्ल० के देहान्त को भी लगभग चौदह सौ वर्ष हो गए हैं और क़िया-
 पता नहीं कब आएगी, इस लम्बी अवधि में जो अनगिनत मनुष्य हुए हैं
र जो होंगे उनकी मुक्ति और कल्याण का आखिर उपाय क्या किया गया
और उन तक हक़ की दावत पहुंचाने का ज़िम्मेदार कौन है? क्या अल्लाह
रसूल सल्ल० केवल अपने समय के अरबों के लिए ही नबी थे? क्या
ल्लाह सारे इन्सानों का मार्ग दर्शक और पथप्रदर्शक नहीं है और उसकी
ालुता सारे इन्सानों के लिए आम नहीं है? क्या अल्लाह अन्यायी है कि
 सारे इन्सानों की मुक्ति और कल्याण के लिए दीन भेजे, सब को पाबंद
 कि उसे अपनाएं किन्तु सारे इन्सानों तक उसके पहुंचाने का प्रबन्ध न
 और फिर यह कह कर उन्हें नरक में डाल दे कि तुम ने तो इस्लाम को
पनाया ही नहीं था?

आखिर इस सवाल का क्या जवाब है? बात साफ़ है कि अल्लाह के
ूल सल्ल० निस्सन्देह रहती दुनिया तक के इंसानों के लिए अल्लाह के
ूल हैं, लेकिन यह दुनिया का सर्वमान्य नियम है कि जिस व्यक्ति के ज़िम्मे
ोई बड़ा काम होता है, वह स्वयं उस काम को करने के साथ अपने प्रति-
धियों, साथियों और अपने अन्तर्गत काम करने वाले गिरोह से कराता
 इसी रूप में वह काम हो पाता है। किसी मनुष्य के लिए चाहे वह
ल्लाह का रसूल ही क्यों न हो, यह संभव नहीं कि वह इस लोक के अन्त
ल तक के लोगों को अपनी दावत स्वयं पहुंचाए। हां, यह बात उसके
ुयायियों के द्वारा संभव हो सकती है। अल्लाह के रसूल सल्ल० पैग़म्बरी

की अपनी तेईस वर्ष की अवधि में जितने लोगों तक हक़ की दावत पहु
सकते थे, अनथक प्रयास करके आप सल्ल० ने उन तक बग़ैर कुछ घट
बढ़ाये पहुंचा दी और इस प्रकार पहुंचाई कि वे उसे भली-भांति समझ
परन्तु यह काम भी आप सल्ल० ने अकेले नहीं किया, जो लोग भी आ
सल्ल० पर ईमान लाते गये, वे हक़ की दावत को दूसरों तक पहुंचाने में आ
सल्ल० के सहायक बनते गये।

हक़ की दावत पहुंचाने के साथ ही आप सल्ल० ने एक काम अ
भी किया। जो लोग आप सल्ल० पर ईमान लाये 'मुस्लिम उम्मत' के न
से आप सल्ल० ने उन्हें एक उम्मत और जमाअत का रूप दे दि
और उन्हें इस प्रकार तैयार किया कि वे इस्लाम का चलता-फिर
नमूना और सत्य-धर्म के सच्चे सन्देशदाता और सत्य के अनुर
बन गये। फिर अल्लाह के हुक्म से आप सल्ल० ने इस उम्मत को यह मह
कार्य सौंपा कि वह दुनिया के दूसरे इंसानों तक अल्लाह का पैग़ाम पहुंचा
क़ुरआन मजीद में है :—

> 'और इस तरह हमने तुमको श्रेष्ठ समुदाय श्रवं बनाया ताकि तुम लोगों को बताओ और तुम्हें रसूल बताए।' —बक़र:, १४३

अर्थात जिस प्रकार अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने मुख से
तक हक़ की दावत पहुंचाई और अपने उच्च और महान चरित्र के माध
से इस्लाम का पूर्ण नमूना पेश किया उसी तरह मुस्लिम उम्मत की
ज़िम्मेदारी है कि वह दुनिया के इंसानों के सामने अपनी ज़ुबान से अ
अपने अमल से इस्लाम का सच्चा साक्षी बने, सूर: हज में है :—

> 'हे ईमान लाने वालो! (अल्लाह के आगे) झुको और सज्दा करो, अपने रब की बन्दगी करो और नेक काम करो ताकि तुम सफल हो और अल्लाह के लिए जान-तोड़ कोशिश करो जैसा कि उस का हक़ है। उसने तुम्हें चुन लिया है। दीन में तुम्हारे लिए कोई तंगी नहीं रखी है, यह तुम्हारे बाप इब्राहीम का पथ है, उस ने तुम्हारा नाम इस से पहले मुस्लिम रखा है और तुम्हारा नाम क़ुरआन में भी मुस्लिम है ताकि रसूल तुम पर गवाह हों और तुम इन्सानों पर गवाह बनो। तो तुम नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो और अल्लाह क़रीबी और सरपरस्त है तो क्या ही अच्छा क़रीबी और सरपरस्त है वह और कितना अच्छा मददगार है।'
>
> —हज, ७७-७८

अर्थात मुसलमानों की ज़िम्मेदारी केवल इतनी ही नहीं है कि वे अल्ल

के इबादतगुज़ार और आज्ञाकारी बंदे, साक्षात नेकी और सदाचार की मूर्ति बन जाएं, बल्कि उनको ज़िम्मेदारी यह भी है कि वे दीन की दावत को पहुंचाने और दुनिया में उसकी स्थापना के लिए भरपूर यत्न करें और जिस प्रकार अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनके सामने अपनी ज़ुबान और व्यवहार से हक़ की गवाही दी है, उसी तरह ये भी दुनिया के इन्सानों के सामने अपनी ज़ुबान और व्यवहार से हक़ की गवाही दें। अल्लाह ने इस बड़े उद्देश्य के लिए उन का चुनाव किया है और उन्हें 'मुस्लिम' (आज्ञाकारी) का शुभ नाम इसीलिए दिया गया है। वे नमाज़ का आयोजन करके, अल्लाह के रास्ते में खर्च करके और अल्लाह पर भरोसा करके वे इस महान कार्य को पूरा कर सकते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस महान कार्य में अल्लाह उन का संरक्षक है और वह बड़ा ही अच्छा कार्य-साधक और सहायक है।

मुस्लिम समुदाय का कितना उच्च स्थान है और उस पर कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी डाली गई है, यह बात इन आयतों से स्पष्ट हो जाती है। अल्लाह के रसूल सल्ल० के दुनिया से प्रस्थान करने के बाद रहती दुनिया तक वह ज़िम्मेदारी मुस्लिम समुदाय की है कि वह आप सल्ल० के पैग़ाम को अल्लाह के बन्दों तक पहुंचाए और अपनी ज़ुबान तथा व्यवहार से उन के सामने इस्लाम की सच्ची गवाही दे। मुस्लिम समुदाय ने अगर इस काम को उसी प्रकार किया जैसा उस का हक़ है तो वह अपनी ज़िम्मेदारी के भार से मुक्त हो जायेगा और अल्लाह के बन्दों तक अल्लाह का पैग़ाम भी पहुंच जायेगा और उन्होंने इस पैग़ाम को क़ुबूल करके या न करके अपनी जिस नीति का भी परिचय दिया होगा, उसी के अनुसार आख़िरत में उनसे मामला होगा। उन्होंने इस पैग़ाम को अस्वीकार किया होगा तो वे नरक में जायेंगे, लेकिन अगर उसे स्वीकार किया होगा तो स्वर्ग पायेंगे। किन्तु यदि मुस्लिम उम्मत ने अपने इस कर्तव्य को नहीं पहचाना, अल्लाह के बंदों तक अल्लाह का पैग़ाम नहीं पहुंचाया, जिसके फलस्वरूप वे अज्ञान और नादानी के कारण शिर्क, कुफ़्र, नास्तिकता और गुनाहों और दुष्कर्म के अन्धेरों में भटकते रहे तो इन असंख्य मनुष्यों को गुमराही और दुष्चरित्रता की ज़िम्मेदारी मुस्लिम उम्मत पर भी आयेगी और वह किसी तरह भी इस का जवाब देने से न बच सकेगी।

एक बात यह भी समझ लेनी चाहिए कि उक्त आयतों के अनुसार दीन की दावत और हक़ की गवाही के सम्बन्ध में तीन फ़रीक़ हैं। एक अल्लाह के रसूल सल्ल०, जिन्होंने हक़ की दावत और गवाही देकर मुस्लिम

उम्मत बनाई। दूसरा फ़रीक़ मुस्लिम उम्मत है जिसे दीन की दावत और हक़ की गवाही देने के काम पर नियुक्त किया गया है। तीसरा फ़रीक़ मुस्लिम उम्मत के बाहर के सभी लोग हैं, चाहे वे अधर्मी, अनेकेश्वरवादी हों, चाहे नास्तिक हों, ये वे लोग हैं जिन तक मुस्लिम उम्मत को हक़ का पैग़ाम पहुंचाना है और इनके समक्ष इस्लाम की मौखिक और व्यावहारिक गवाही का हक़ अदा करना है। दूसरे शब्दों में दीन की दावत असल में उन लोगों को दी जायेगी जो अधर्मी, अनेकेश्वरवादी, नास्तिक और इस्लाम से दूर हैं। मुस्लिम उम्मत हक़ की गवाही और दीन की दावत देने की ज़िम्मेदारी से उसी समय मुक्त हो सकती है, जब उन तक अल्लाह का पैग़ाम पहुंचा दे। नबी अलैहि० भी अधर्मियों और अनेकेश्वरवादियों को सत्य धर्म का सन्देश पहुंचाते थे और यही काम मुस्लिम उम्मत को उनके अनुसरण में करना है।

यह बात इसलिए स्पस्ट करनी पड़ी क्योंकि जब मुसलमानों में दीन के प्रचार और उसकी तब्लीग़ का जज़बा पैदा होता है तो वे हिर-फिर कर मुसलमानों ही में सुधार और प्रचार का काम शुरू कर देते हैं। कुछ लोग तो ग़ैर-मुस्लिमों को इस योग्य ही नहीं समझते कि उन तक हक़ का पैग़ाम पहुंचाया जाय और कुछ लोग सोचते हैं कि मुसलमानों के सुधार के सिलसिले में जो प्रयास वे कर रहे हैं बस वही काफ़ी है, गैर-मुस्लिमों तक हक़ पहुंचाने की आवश्यकता नहीं है, उनका विचार है कि जब मुसलमान स्वयं अज्ञान में पड़े हुए हैं, और वे अक़ीदे और अमल की ख़राबी की आखिरी सीमाओं को पहुंचे हुए हैं तो फिर उनके सुधार ही से कहां फ़ुरसत है, जो हम ग़ैर-मुस्लिमों की ओर ध्यान दे सकें।

इसमें सन्देह नहीं कि मुसलमानों में बिगाड़ हद से ज़्यादा फैला हुआ है और इस में भी सन्देह नहीं कि उन का सुधार करना उन सभी लोगों की ज़िम्मेदारी है, जिन के अन्दर दीन की चेतना पाई जाती है और वे मिल्लत का दर्द भी रखते है। मुसलमान हमारे भाई हैं, उनका बिगाड़ हमारा बिगाड़ है और उनका सुधार हमारा अपना सुधार है और इस काम का महत्व तनिक भी कम नहीं है, किन्तु ग़ैर-मुस्लिमों तक इस्लाम का पैग़ाम पहुंचाने का काम भी कुछ कम महत्व नहीं रखता। हम उसी समय दीन की दावत पहुंचाने के भार से मुक्त हो सकते हैं, जब हम ग़ैर-मुस्लिमों तक अल्लाह के दीन का पैग़ाम पहुंचा दें। वास्तव में यह काम पूरी मुस्लिम उम्मत का था, मगर यह हमारा दुर्भाग्य है कि जो दीन की दावत देने वाले

उन्हें स्वयं इस्लाम से अवगत कराना पड़ रहा है। जो लोगों के सुधार
ने के ज़िम्मेदार थे वे आज स्वयं सुधार के मुहताज हो गये हैं और जिन
द्वारा पूरी मानवता को सफलता और भलाई मिल सकती थी, वे हर
ार की बुराइयों में ग्रस्त हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है और हमें इस स्थिति
बदलना है, लेकिन इसी तरह हमें ग़ैर-मुस्लिमों तक अल्लाह का पैग़ाम
पहुंचाना है। अल्लाह का दीन मुसलमानों की मीरास (सम्पत्ति) नहीं
वह तो सारे इंसानों को दुनिया और आखिरत की सफलता का अधि-
री बनाने आया है और यह ज़िम्मेदारी हमारी है कि अल्लाह के उन
दों तक जो अल्लाह के दीन से अनभिज्ञ हैं अल्लाह का दीन पहुंचाएं।
ें तो वे कल आखिरत में अल्लाह के सामने हमारा दामन पकड़ेंगे कि इन
लिमों के पास तेरा वह दीन था जिसमें दुनिया की सफलता और आखि-
की निजात थी, लेकिन इन्होंने हम तक इसे नहीं पहुंचाया और उस
य हमारे पास इसका कोई जवाब न होगा और पता नहीं फिर हमारा
अन्जाम होगा।

इस सिलसिले में एक बात लोगों के मन में खटकती है और वह यह
ग़ैर-मुस्लिमों तक हक़ की दावत पहुंचाने का फ़ायदा नहीं है, क्योंकि वे
उसे स्वीकार करेंगे नहीं। लेकिन यह बात बिल्कुल निराधार है।
ाम की दावत जब भी पेश की गई है और जिस देश और जिस माहौल
भी पेश की गई है, भाग्यशाली लोगों ने उसे क़ुबूल किया है। दुनिया में
हुए लगभग एक अरब मुसलमान इस सत्य का ज़िन्दा सबूत हैं। प्यारे
सल्ल० आरम्भ में अकेले ही थे फिर आप सल्ल० ने आस-पास के ग़ैर-
लमों को हक़ की दावत दी और एक-एक, दो-दो व्यक्ति ईमान लाकर
सल्ल० के पास जमा होते चले गए, यहां तक कि २३ वर्ष की अल्प
धि में पूरा अरब मुसलमान हो गया। फिर सहाबा रज़ि० अरब से उठे
दुनिया के बड़े हिस्से में फैल गये और उन के दावत पहुंचाने के प्रयासों
फलस्वरूप अनेकों देशों में इस्लाम फैल गया। सहाबा रज़ि० के बाद भी
काम थोड़ा बहुत होता ही रहा और हिन्दुस्तान, लंका, मलेशिया,
नेशिया और चीन इत्यादि देशों में इस्लाम सहाबा रज़ि० ने नहीं, बल्कि
के लोगों ने फैलाया। आज भी जबकि इस्लाम के प्रचार का कोई
ेखनीय प्रयास नहीं हो रहा है, दुनिया के हर हिस्से में लोग इस्लाम
कार कर रहे हैं। हिन्दुस्तान का हाल भी दुनिया के दूसरे हिस्सों से
न नहीं हैं। खुशनसीब आत्माएं सत्य की खोज में निकलती हैं और उसे
ाने के बाद सीने से लगा लेती हैं।

मान लीजिए, एक ग़ैर-मुस्लिम भी इस्लाम क़ुबूल नहीं करता और हम दावत देते-देते दुनिया से कूच कर जाते हैं तो क्या हमें नाकाम समझा जायेगा ? हम तो अल्लाह के बन्दे हैं, हमारी कामियाबी इसी में है कि हम उसके आदेश का पालन करें। उस ने आदेश दिया कि हम उसके दीन की दावत दें और हमने दावत वैसे ही दे दी जैसी देना चाहिए तो हम कामियाब हो गये, हमारा बदला कहीं नहीं गया।। हम अल्लाह की प्रसन्नता और उसकी जन्नत के अधिकारी हो गये। नुक़सान तो उन लोगों का हुआ जिन्होंने हक़ को क़ुबूल नहीं किया।

यह बात भी अच्छी तरह समझ लीजिए कि मुसलमान हो या ग़ैर-मुस्लिम उनका सुधार करना या उनको हिदायत देना हमारे बस में नहीं, यह तो अल्लाह ही का काम है, हमारा काम तो केवल कोशिश करना है। क़ुरआन मजीद में है :—

> '(हे नबी !) तुम हिदायत देने वाले नहीं हो जिसे चाहो, बल्कि अल्लाह ही जिसे चाहे हिदायत देता है।' —क़सस ५६

हम देखते हैं कि आप सल्ल० के चचा अबू तालिब आप सल्ल० की भरपूर कोशिशों के बावजूद ईमान न लाए, हालांकि वे अन्तिम समय तक मुसलमानों के सहायक बने रहे।

दीन की दावत देने की कोशिशों के बावजूद अगर कोई व्यक्ति आगे न बढ़े तब भी हम असफल न होंगे, लेकिन अगर कुछ लोगों को अल्लाह ने हक़ को क़ुबूल करने की तौफ़ीक़ दी तो उनका ईमान और भले कर्मों से भरी हुई ज़िन्दगी का बदला जिस तरह उन्हें मिलेगा, हमें भी मिलेगा। अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

> 'जो व्यक्ति हिदायत की ओर बुलाये उसका अज्र उन तमाम लोगों के अज्र के बराबर है, जो उसकी पैरवी करेंगे इससे उनकी उजरतों में कोई कमी भी न होगी।'

कितने बड़े लाभ का सौदा है यह ! धन्य हैं ऐसे लोग जो इस महान सौदा करने के लिए आगे बढ़ें।

*

भलाई पर उभारना और बुराई से रोकना

इस्लाम की दावत देने ही पर मोमिन का काम समाप्त नहीं हो ाता, उसकी ज़िम्मेदारी यह भी है कि वह भलाइयों के प्रचार और बुरा- ों के उन्मूलन के लिए अपना प्रभाव और अपनी शक्ति का इस्तेमाल रे, घर के अन्दर और घर के बाहर जहाँ उसकी चलती हो वह भलाइयों । कहे और बुराइयों से रोके। क़ुरआन मजीद में है—

'ईमान वाले पुरुष और ईमान वाली स्त्रियां एक दूसरे के क़रीबी और साथी हैं। ये लोग भलाई को कहते, बुराई से रोकते, नमाज़ क़ायम करते, ज़कात देते और अल्लाह और उसके रसूल का कहा मानते हैं।' —तौबा, ७१

इन आयतों से दो बात स्पष्ट हुईं : एक यह कि नमाज़ क़ायम करने, कात देने, और अल्लाह और रसूल का कहा माननें के साथ भलाई को हना और बुराई से रोकना भी ईमान वालों का अनिवार्य और मौलिक ग है। दूसरी यह कि ये गुण पुरुषों की तरह स्त्रियों में भी होने चाहिएं।

सूरः आले इमरान में इससे भी आगे बढ़कर बताया गया है—

'तुम उत्तम गिरोह हो, जो सारे इंसानों के सामने लाया गया है, तुम भलाई को कहते हो, बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर तुम्हारा ईमान है।' –आले इमरान, ११०

अर्थात मुस्लिम उम्मत वह उत्तम संगठन है जो सारे मनुष्यों की ़दायत और रहनुमाई के लिए सामने आया है। इसकी विशेषता यह है ़ यह भलाई करने को कहता है और बुराई से रोकता है और सब कुछ रिणाम है इस बात का कि यह अल्लाह में आस्था बनाए हुए है।

अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

'तुममें से जो व्यक्ति किसी बुराई को देखे उसे अपने हाथ से मिटा दे। अगर उसे इसकी सामर्थ्य न हो तो ज़ुबान ही से सही

श्रौर अगर इसकी भी शक्ति न हो तो दिल से उसे मिटाने के लिए व्याकुल हो, लेकिन यह सबसे कमजोर ईमान है।' —मुस्लिम

उक्त हदीस से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ईमान और बुरा में बैर है। मोमिन बुराई को देखता है तो उसे अपने बाहुबल से मिट देना चाहता है। अगर इसका साहस उसे नहीं होता तो फिर वह उसवे विरुद्ध ज़ुबान इस्तेमाल करता है, अगर इसका साहस भी नहीं होता तं वह दिल से तड़पता है कि बुराई मिट जाय, किन्तु यह सबसे कमजो ईमान की बात है। अगर ईमान सही हालत में हो तो मोमिन बुराइ वे खिलाफ़ ज़ुबान और ताक़त इस्तेमाल करेगा। उसके ईमान की अपेक्षा भं यही है और इसी का अल्लाह और रसूल की ओर से आदेश भी है!

अगर बुराई को तत्काल रोका न जाय तो वह समाज में फैलतं जाती है और फिर समाज ईश्वर के प्रकोप का पात्र बन जाता है और जब उसका प्रकोप होता है तो वे लोग भी नहीं बचते जो उस बुराई मे ग्रस्त न थे। प्यारे रसूल सल्ल० का कथन है—

'लोग जब किसी बुराई को देखें और तब्दीली न लाएं तो (समझ लेना चाहिए) वह दिन क़रीब है कि अल्लाह उन सभी को अपने अजाब से घेर लेगा।' (तिर्मिज़ी, इब्ने माजा)

एक अन्य हदीस में है—

'क़सम है उस ज़ात की जिसके हाथ में मेरी जान है, तुम्हें नेकी का हुक्म ज़रूर देते रहना है और बुराई से अवश्य रोकते रहना है, वरना वह दिन निकट है जब अल्लाह तुम पर अपने पास से अजाब भेजे, फिर तुम उससे दुआएं करोगे और तुम्हारी दुआएं क़ुबूल न होंगी।' —तिर्मिज़ी

अगर किसी समाज में अल्लाह की नाफ़रमानी हो रही हो और कोई नाफ़रमानी को रोकने वाला और नाफ़रमान का हाथ पकड़ने वाल न हो, तो पूरा समाज किस तरह तबाह हो जाता है, इसे अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक उदाहरण से समझाया :—

'अल्लाह की हदों में सुस्ती करने वाले और उन्हें तोड़ने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे एक गिरोह ने एक जहाज़ को मिलकर लिया और कुछ लोग उसकी ऊपर की मंज़िल में हो गए और कुछ नीचे की मंज़िल में, तो नीचे वाला पानी लेकर ऊपर वालों के पास से गुज़रा, तो उन्हें इससे तक्लीफ हुई (और उन्होंने उसे मना कर

दिया) तब उसने कुलहाड़ा लिया और जहाज़ के नीचले हिस्से में छेद करने लगा। लोग उसके पास आए और उन्होंने पूछा कि क्या कर रहे हो? उसने कहा मेरे ऊपर जाने-आने से तुम्हें तक्लीफ होती है और मुझे पानी अवश्य चाहिए (इसलिए सूराख़ कर रहा हूं) अब अगर उन्होंने उसका हाथ पकड़ लिया तो उसे भी बचा लेंगे और अपने आपको भी और अगर उसे (जहाज़ में सूराख़ करने के लिए) छोड़ दिया तो उसे भी हलाक कर देंगे और अपने आप को भी।'
—बुख़ारी

यह कितनी अच्छी मिसाल है। वास्तव में अल्लाह की नाफ़रमानी समाज को उसी प्रकार तबाह करने वाली चीज़ है जैसे सूराख से जहाज़ अपनी सवारियों सहित तबाह हो जाता है। जहाज़ में सूराख करने वाले का यह कार्य हालांकि व्यक्तिगत होता है किन्तु उसका यह कार्य सभी सवारियों को डुबा देने का कारण बनता है। ऐसा ही मामला अल्लाह की नाफ़रमानी का है। अगर लोगों का व्यक्तिगत कार्य समझ कर उसे छोड़ दिया जाय तो समाज में नाफ़रमानी और बुराई आम हो जाती है और पूरा समाज तबाही के घाट उतर जाता है। इसके विपरीत अगर कोई व्यक्ति किसी बुराई और अल्लाह की किसी नाफ़रमानी को शुरू ही में रोक देता है तो न केवल यह कि उस व्यक्ति को गुनाह और तबाही से बचा लेता है, बल्कि पूरे समाज को अल्लाह की नाफ़रमानी और उसके विनाशकारी परिणामों से सुरक्षित कर देता है।

मुसलमान समाज के सिलसिले में हमारी बुनियादी ज़िम्मेदारी यह है कि हम उसमें किसी भलाई को मिटने और किसी बुराई को बढ़ने न दें। जहां भी अल्लाह के किसी हुक्म से ग़फ़लत बरती जा रही हो या कोई बुराई अपनाई जा रही हो तो हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम उसी समय उसका नोटिस लें। समझा-बुझाकर, अपन असर डालकर, अपनी ताक़त इस्तेमाल करके बुराई को रोकें और भलाई को फैलाने की अनथक कोशिश करें। हमारे होते हुए शराब, जुए, ब्याज, व्यभिचार और ज़ुल्म का रिवाज न हो, मुसलमान आपस में लड़ न सकें, मस्जिदें आबाद हों, रमज़ान का अनादर न हो, ज़कात और हज अदा करने में कोताही न हो। कोई क़िसी का हक़ न मारे, झूठ बोलना, वायदा तोड़ना, ख़ियानत और बेशर्मी को फैलने का मौक़ा न मिले। तात्पर्य यह कि अल्लाह की कोई नाफ़रमानी न हो और अगर हो तो उसे रोकने के लिए हम अपना पूरा ज़ोर लगा दें। इस

प्रकार हम अपने आप को और मुस्लिम समाज को अल्लाह की यातनाओं से बचा सकेंगे।

अगर हम किसी ग़ैर-मुस्लिम समाज में रहते हों तो हमारी ज़िम्मेदारी है कि उस समाज में भी हम यही नीति अपनायें। जिन भलाइयों को सब लोग भलाई समझते हैं, ग़ैर-मुस्लिमों के सहयोग से उन्हें हम फैलाने की कोशिश करें और जिन बुराइयों को सब लोग बुराई मानते हैं, हम सब मिल-जुल कर उनके उन्मूलन का यत्न करें। इस सिलसिले में ग़ैर-मुस्लिमों से भी सहयोग किया जा सकता है। क़ुरआन मजीद में कहा गया :—

'भलाई और नेकी के कामों में एक दूसरे से सहयोग करो और गुनाह तथा सरकशी के कामों में सहयोग मत करो।'

—माइदा, २

लेकिन हम अपने लक्ष्य में उसी समय सफल हो सकते हैं, जब हमारा दामन बुराइयों से पाक हो और हमारा जीवन भलाइयों से परिपूर्ण हो, लेकिन अगर ऐसा हुआ कि हम अपने आपको भुला कर दूसरों ही को नसीहत करने में लगे रहे, लोगों को तो बुराई से रोकते रहे और स्वयं बुराई करते रहे, हम भलाइयों का उपदेश देते रहे किन्तु ख़ुद भलाइयों से कोसों दूर रहे तो न केवल यह कि हम समाज को सुधारने में सफल न होंगे बल्कि आख़िरत में अल्लाह की कठोर यातनाओं के भी पात्र होंगे। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है :—

'क़ियामत के दिन एक आदमी को लाया जाएगा और उसे नरक की आग में डाल दिया जाएगा। उसकी अंतड़ियां आग में निकल पड़ेंगी और वह (तक्लीफ़ की वजह से) नरक में इस तरह चक्कर काटता फिरेगा जैसे गधा अपनी चक्की में घूमता है। नरक वाले उसके पास जमा हो कर उस से पूछेंगे, हे फ़लां! यह तुम्हारी क्या हालत है? क्या तुम हमें नेकी का हुक्म नहीं करते थे और बुराई से नहीं रोकते थे? वह कहेगा, हां मैं तुम से भलाई को कहता था परन्तु स्वयं भलाई नहीं करता था और मैं तुम्हें बुराइयों से रोकता था, मगर स्वयं बुराइयां करता था।' —बुख़ारी, मुस्लिम

कितना दुखद है यह परिणाम! और कितनी शिक्षाप्रद है यह हदीस!

*

अल्लाह का बोलबाला करना

पिछले तीन अध्यायों—'घर का सुधार', 'इस्लाम का सन्देश' और 'भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना' से यह बात भली-भांति स्पष्ट हो चुकी है कि मोमिन जिस प्रकार खुद अल्लाह की बन्दगी और उसका आज्ञापालन करना चाहता है, उसी प्रकार वह चाहता है कि उसके घर में भी अल्लाह का हुक्म चले, उसके आस-पास रहने-बसने वाले सभी मनुष्य उसी के समान अल्लाह के सच्चे बन्दे बन जायें, उसका समाज बुराइयों से बिल्कुल पाक हो जाए और भलाइयों से भर जाए। दूसरे शब्दों में यह कि उस के घर, उसके समाज और उसके इलाक़े में अल्लाह की नाफ़रमानी का नाम और निशान तक बाक़ी न रहे।

परन्तु यह बात उसी समय संभव है जबकि अल्लाह के दीन को उसके देश में सत्ता एवं अधिकार प्राप्त हो, देशवासियों पर अल्लाह की मर्ज़ी के सिवा किसी की मर्ज़ी न चले और घरेलू जीवन से लेकर राज-नैतिक और आर्थिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों तक हर जगह अल्लाह का क़ानून लागू हो और समाज की तरह राष्ट्र का निर्माण भी अल्लाह के दीन के अनुसार हो।

अल्लाह के क़ानून के अलावा कोई और क़ानून लागू होगा तो जीवन के कुछ थोड़े से भाग को छोड़ कर शेष पूरे जीवन में इन्सान उसी प्रचलित क़ानून के पालन पर विवश होगा और जीवन के जिस थोड़े भाग में यह क़ानून अल्लाह की बन्दगी की इजाज़त देगा, उसका भी विस्तार कम होता जायेगा। वह अपने घर वालों को अल्लाह की मर्ज़ी के सांचे में ढाल न सकेगा, क्योंकि माहौल पर कुफ़्र, शिर्क, नास्तिकता और बुराइयां छाई हुई होंगी, वह अपने इलाक़े को बुराइयों से पाक न कर सकेगा, क्योंकि समय के क़ानून की दृष्टि में वे वैध समझी जा रही होंगी।

वह शराब पीने को बन्द न कर सकेगा क्योंकि शराब के कारोबार और उसके पीने-पिलाने पर समय के क़ानून को सरपरस्ती हासिल होगी। वह ब्याज के लेन-देन से बच न सकेगा क्योंकि ब्याज के लेन-देन को समय की अदालतों का समर्थन प्राप्त होगा और समय की व्यवस्था की नस-नस में ब्याज दौड़ रहा होगा। वह अश्लीलता और नग्नता को रोकने में असफल रहेगा, क्योंकि समय की व्यवस्था अपने समस्त साधनों–सिनेमा, रेडियो दूरदर्शन, तथा गन्दी पुस्तकों और पत्रिकाओं—के द्वारा पूरी शक्ति से उसे फैला रहा होगा। वह स्त्री पुरुष के अनुचित मेल-जोल, व्यभिचार और व्यभिचार की ओर ले जाने वाली चीज़ों पर प्रतिबन्ध न लगा सकेगा क्योंकि यह प्रचलित सभ्यता के आकर्षक और उभरे हुए पहलू समझे जा रहे होंगे

वह अपनी सन्तान को दीनी शिक्षा न दिला सकेगा, क्योंकि प्रचलित शिक्षा प्रणाली दीनी शिक्षा से बिल्कुल खाली होगी और इसके साथ ही उस का अपना माहौल और शिक्षा-दीक्षा का ढंग भी धर्म और नैतिक मान्यताओं के विपरीत होगा। वह अदालतों से अल्लाह के क़ानून के अनुसार फ़ैसले न करा सकेगा, क्योंकि उन अदालतों से ऐसे क़ानूनों के अनुसार फ़ैसले होते होंगे, जो अल्लाह के क़ानून के विरुद्ध हैं। उस का पर्सनल ला भी हर समय खतरे में होगा। समय का शासन जब चाहेगा उसे समाप्त करके समान सिविल कोड लागू कर देगा और मुसलमान मजबूर होगा कि विवाह और तलाक़ जैसे मामलों में भी इस्लामी क़ानून पर अमल न कर सके।

जब अल्लाह के दीन के अलावा किसी और जीवन व्यवस्था के हाथ में सत्ता हो तो फिर इसी प्रकार के परिणाम सामने आते हैं। कोई भी दीन पराधीन रह कर फल-फूल नहीं सकता। इस्लाम के लिए तो यह और भी असंभव है क्योंकि वह तो पूरी ज़िन्दगी पर छाया हुआ है और व्यक्तिगत और सामूहिक सभी मामलों के लिए उसके पास अपने आदेश हैं—ऐसा दीन अगर पराधीन हो तो भला उस पर कैसे चला जा सकता है। हक़ीक़त यह है कि जो व्यक्ति भी अल्लाह की बन्दगी में सच्चा होगा, वह दिल से इसकी अभिलाषा और जीवन भर इसका प्रयास करेगा कि अल्लाह की ज़मीन पर अल्लाह की मर्ज़ी के अलावा किसी की मर्ज़ी न चले और उसके क़ानून के सिवा कोई अन्य क़ानून लागू न हो। अल्लाह जिस से बढ़ कर दूरदर्शी और ज्ञान वाला कोई नहीं, उसने खुद यह स्पष्ट कर दिया है कि यह दीन सत्तावान होने के लिए आया है और रसूल को भेजने का

द श्य इसके अलावा कुछ नहीं कि अल्लाह का दीन आखिरकार दुनिया में भुत्वशाली और लागू हो :—

'वह अल्लाह ही है जिस ने अपने रसूल को हिदायत और सत्य-धर्म के साथ भेजा ताकि उसे समस्त धर्मों पर ग़ालिब कर दे, चाहे मुश्रिकों को कितना ही ना-पसन्द हो।' –तौबा ३३, सफ़्फ़ ६

क़ुरआन में यह आयत इन शब्दों में सूरः तौबा और सूरः सफ़्फ़ में आ आख़िरी शब्दों में थोड़े परिवर्तन के साथ सूरः फ़त्ह में भी आई है— ल्लाह ने दीन के उतरने और रसूल को भेजे जाने का मक़सद स्पष्ट शब्दों बार-बार बयान कर दिया है ताकि किसी के लिए किसी तरह का सन्देह रहे—इन तीनों सूरतों में एक ही बात विभिन्न ढंग से कही गई है और बात यह है कि ईमान वाले अल्लाह के दीन को ग़ालिब और लागू करने लिए अपना सब कुछ लगा दें। मौलिक रूप से यही उनके ईमान की पेक्षा है। यही उनके मोमिन होने का सबूत है और इसी से वे दुनिया अल्लाह की मदद और आखिरत में जन्नत पा सकते हैं :—

यह इसलिए कि रसूल के द्वारा अल्लाह के दीन के ग़ालिब होने का रीक़ा ही यही एक है कि रसूल के अनुयायियों की कोशिशें इस काम में ा जायें। अकेला रसूल न तो सत्य विरुद्ध शासन को पराजित कर सकता और न सत्य एवं न्याय पर आधारित शासन व्यवस्था को ग़ालिब कर कता है। यही कारण है कि सूरः सफ़्फ़ में इस आयत के तुरन्त बाद कहा ा है :—

'हे ईमान लाने वालो ! क्या मैं तुम्हें ऐसा व्यापार बताऊं जो तुम्हें (अल्लाह की) दुखदायिनी यातना से बचाये। अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाओ और अल्लाह की राह में अपने माल और अपनी जान से पूरा प्रयास करो, तुम्हारे लिए अच्छा यही है अगर तुम जानते। इस सूरत में वह तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा और तुम्हें ऐसे बाग़ों में दाखिल करेगा जिसके नीचे नहरें बहती होंगी और वह अच्छे पवित्र महलों में जगह देगा, जो शाश्वत बाग़ों में होंगे। यही महान सफलता है और एक और चीज़ प्रदान करेगा जो तुम्हें प्रिय है वह अल्लाह की मदद और निकट ही प्राप्त होने वाली विजय और (हे नबी !) ईमान वालों को शुभ सूचना दे दो।' —सफ़्फ़ १०-१३

इन आयतों से पहली बात तो यह स्पष्ट हुई कि इन आयतों का

सम्बोधन सहाबा रज़ि० ही से नहीं है, बल्कि सभी ईमान वालों को इन
सम्बोधित किया गया है, इसीलिए 'हे ईमान वालो !' से वार्ता का आरम्
हुआ है।

दूसरी बात इन आयतों से यह स्पष्ट होती है कि नरक की यातनाओं
से मुक्त होने, गुनाहों के क्षमा किये जाने और स्वर्ग के अधिकारी होने क
राह यह है कि इंसान अल्लाह और उसके रसूल पर सच्चे दिल से ईमा
लाए और फिर अल्लाह को खुश करने के लिए उसके दीन को ग़ालिब कर
के प्रयास में अपने आपको अपनी योग्यताओं और शक्तियों और अप
समस्त साधनों को लगा दे।

तीसरी बात इन आयतों से यह विदित है कि यह रास्ता हालांि
देखने में बिल्कुल क़ुर्बानी और बलिदान का रास्ता है, लेकिन वास्तव में य
अत्यन्त लाभप्रद व्यापार और बहुत बड़ी सफलता का सौदा है। दुनिया
अल्प जीवन को जिसका हर हाल में अन्त होना ही है और ऐसे माल दौल
और सम्पत्ति को जो एक न एक दिन हमसे छिन कर रहेगी, ख़ुदा की रा
में न्यौछावर करके और अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने में लगाकर ह
आख़िरत की शाश्वत और दुखदायनी यातनाओं स मुक्ति प्राप्त कर लेते
और स्वर्ग की चिरस्थाई, अपार और ऐसी नेमतें पा लेते हैं जिन की आ
हमकल्पना भी नहीं कर सकते। क्या यह महान सफलता नहीं है ?

और चौथी बात इन आयतों से यह मालूम होती है कि आख़िरत व
शाश्वत और अक्षय सफलता से पहले दुनिया की सफलता का मार्ग भी य
है। जो लोग अल्लाह के दीन को प्रभुत्वशाली बनाने और उसे लागू कर
के लिए अपना सब कुछ लगा देते हैं, अल्लाह उनको मदद करता है औ
विजय और सफलता उनके लिए लिख दी जाती है।

सूरः तौबा में है, 'जो लोग अल्लाह पर और आख़िरत पर (सच-
सच) ईमान रखते हैं वे अपने मालों और अपनी जानों के साथ
जिहाद के सिलसिले में तुमसे रुख़सत नहीं चाहेंगे, अल्लाह तो उन
लोगों को जानता है जो डरने वाले हैं। तुम से रुख़सत केवल वही
लोग चाहते हैं जो अल्लाह और आख़िरत पर ईमान नहीं रखते
और जिनके दिल संदेह में पड़े हैं। तो वे अपने संदेह में डाँवाडोल
हो रहे हैं। —तौबा, ४४-४५

इन आयतों से मालूम हुआ कि अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने
कोशिश इंसान के दीन और ईमान की कसौटी है। एक सच्चा ईमान वा
इस कोशिश से कतराने के लिए बहाने तलाश नहीं करता, वह तो अप

व कुछ इस राह में लगा देता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति दीन को ालिब करने के संघर्ष में अपना हिस्सा अदा नहीं करता और तरह-तरह ः बहाने और बातें बना कर बचने की कोशिश करता है अल्लाह के कथना-सार वह अल्लाह और आखिरत पर ईमान नहीं रखता, झूठा है, अगर ह स्वयं को मुसलमान कहता है।

कहा जा सकता है कि भारत जैसे देश में जहां ग़ैर-मुस्लिम बहुत धिक संख्या में हैं, इस्लाम किस तरह प्रभुत्व प्राप्त कर सकता है? इस ा जवाब यह है कि स्वयं नबी सल्ल० भी शत-प्रतिशत ग़ैर-मुस्लिमों ही में ाये थे, आपकी कोशिशों और प्रयासों से इस्लाम फैलना शुरू हुआ और क दिन ऐसा आया कि पूरा अरब मुसलमान हो गया और इस्लाम अरब ा प्रभुत्वशाली दीन बन गया।

भारत एक लोकतांत्रिक देश है और लोकतंत्र में व्यवस्था-परिवर्तन नाशाही और साम्राज्य के मुक़ाबले में आसान होता है। यहां की जनता स शासन प्रणाली को पसन्द करेगी वही देश की शासन-प्रणाली होगी। गर यहां के अधिकांश लोग इस्लाम को अपने दुखों का इलाज समझ लें ो इस्लाम देश की शासन व्यवस्था का स्थान ले सकता है, परन्तु इस न्तिम चरण तक पहुंचने के लिए उन कामों के करने की ज़रूरत है, जिन ा उल्लेख इस से पहले हो चुका है। अगर इस्लाम की ओर बुलाने वाले स्लाम का सच्चा नमूना और सचरित्रता की प्रति मूर्ति बन जायें, अगर स्लि म समुदाय का सुधार हो जाए अगर ग़ैर-मुस्लिमों में इस्लाम का व्यापक प से परिचय करा दिया जाए और इस्लाम के सम्बन्ध में उनकी ग़लत-हमि यां दूर हो जाएं तो यह मंज़िल दूर न रहेगी। इंशाअल्लाह

अच्छा संगठन

कोई भी क़ौम और कोई भी गिरोह हो उसके बाक़ी रहने और उस ो आज़ादी के लिए एकता एक अनिवार्य शर्त है। एकता स्वयं बहुत बड़ी ाक़त है। संगठित-क़ौम को न तो आसानी से पराजित किया जा सकता और न मिटाया जा सकता है। क़ौमें एकता, बलिदान और प्रयासों के ारण ही सम्मान और विजय पाती हैं और विरोधी क़ौमों को उनके मुक़ा-ले में मुंह की खानी पड़ती है।

इसके विपरीत जिस क़ौम में फूट हो वह उन्नति प्राप्त नहीं कर

सकती। उसकी शक्तियाँ आपसी संघर्ष में नष्ट होती रहती हैं, उसकी धाक दुनिया से उठ जाती है और दूसरी क़ौमें उसे आसानी से हड़प कर जाती हैं। वे उस पर हाथ डाल कर उसके सम्मान और प्रतिष्ठा ही को नहीं बल्कि आज़ादी को भी मिट्टी में मिला देती हैं, फिर उसके लिए अपने अस्तित्व, अपनी सभ्यता, अपनी भाषा, अपनी क़ौमी विशेषताएं और अपने दीन की रक्षा अत्यन्त मुश्किल हो जाती है और वह अपमान, दासता, पस्ती, गुमनामी और विवशता का जीवन व्यतीत करने पर बाध्य हो जाती है।

लेकिन अगर किसी गिरोह के पास कोई उत्तम जीवन-प्रणाली हो और उसको ग़ालिब करना उस का परम उद्देश्य हो, तो ऐसे गिरोह के लिए एकता और संगठन का महत्व बहुत बढ़ जाता है। एकता के बिना कोई लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता, संगठन के बग़ैर कोई क्रांति नहीं लाई जा सकती और संगठन के बग़ैर किसी व्यवस्था के ग़ालिब होने की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

मुस्लिम उम्मत एक ऐसी उम्मत है जो पूरी दुनिया में फैली हुई है अगर इसमें एकता न हो तो इसे दूसरी क़ौमों की अधीनता और उनमें विलय होने से किस तरह बचाया जा सकता है? फिर यह उम्मत इस्लाम के सिद्धांतों की रक्षक है। इन सिद्धांतों पर उसी समय चला जा सकता है जब इस उम्मत के अन्दर परस्पर बिखराव और विभेद न पाया जाता हो, क्योंकि इस हालत में तो वे मिल-जुल कर नमाज़ भी नहीं पढ़ सकते, जो दीन के सर्वप्रथम और मूल आदेशों में से है। असंगठित अवस्था में तो यह उम्मत स्वयं को फ़ितनों से भी नहीं बचा सकती। इस हालत में कोई भी व्यक्ति उठ कर उम्मत को किसी भी गुमराही में डाल सकता है और आपस की फूट के कारण उम्मत इस फ़ितने को रोकने में असमर्थ होगी। उम्मत का इतिहास साक्षी है कि फूट के समय में फ़ितने पैदा होते हैं और बढ़ते फैलते रहे हैं और ये फ़ितने उम्मत में और अधिक फूट पैदा कर देते हैं। इस्लामी व्यवस्था की स्थापना उसी समय सम्भव है जब उम्मत संगठित हो कर इस के लिए प्रयास करे। बिखरी हुई दशा में किसी व्यवस्था की स्थापना की आशा करना केवल एक भ्रम मात्र है।

यही कारण है कि इस्लाम ने मुसलमानों में एकता और उनके संगठन को असाधारण महत्व दिया है। इस्लाम ने न सिर्फ़ यह कि मुसलमानों को संगठित रहने और बिखराव तथा विभेद से बचने का आदेश दिया है बल्कि यह भी बताया है कि किस बुनियाद पर और किस उद्देश्य के लिए

ंगठित हों और अपनी एकता को किस प्रकार बाक़ी रखें और सुदृढ़ बनायें, ़ुरआन में है :—

'सब मिल कर अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़े रहो और फूट में न पड़ो। अल्लाह की उस कृपा को याद करो जो उस ने तुम पर की है, तुम एक दूसरे के दुश्मन थे। उसने तुम्हारे दिलों को आपस में एक दूसरे से जोड़ दिया और तुम उसकी कृपा से भाई-भाई हो गये। तुम आग के एक गड्ढे के किनारे खड़े थे, अल्लाह ने तुम्हें उस से बचा लिया। इस तरह अल्लाह अपनी आयतें तुम्हारे लिए खोल-खोल कर बयान करता है ताकि तुम (सीधी) राह पा लो।' —आले इम्रान १०३

इस आयत से कई बातें स्पष्ट हुईं। एक यह कि मुसलमानों की एकता ल्लाह की बहुत बड़ी नेमत है। दूसरी बात यह मालूम हुई कि इस एकता के ाना मुसलमान सीधे रास्ते पर नहीं चल सकते, तीसरी यह कि आपस का ाभेद और फूट वर्जित है और निन्दनीय है और चौथी बात इन आयतों से ह मालूम हुई कि मुसलमानों की एकता की बुनियाद अल्लाह की रस्सी ो मज़बूती से पकड़ना है; अर्थात मुसलमान अल्लाह की रस्सी को मज़बूती थामें, उसकी किताब और उसके रसूल की सुन्नत से चिमट जायें और त्य धर्म की बुनियाद पर एकमत हो जाएं और भाई-भाई बन कर रहें। गठित होने के बाद उन्हें करना क्या है, इसकी व्याख्या अगली आयत रती है :—

'और तुम्हें एक ऐसा गिरोह बन जाना चाहिए जो भलाई की तरफ़ बुलाए, नेकी पर उभारे और बुराई से रोके और ऐसे ही लोग कामियाब और सफल हैं।' —आले इम्रान १०४

अर्थात इस संगठन के आविर्भाव का उद्देश्य, भलाई पर उभारना ौर बुराई से रोकना है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इसका उद्देश्य स्लाम का बोलबाला करना है।

अगली आयतें बिखराव और विभेद के निन्दनीय होने को पूरी तरह ग़ष्ट करती हैं :—

'तुम उन लोगों की तरह न हो जाना जिन में फूट पड गई और उसके बाद कि उनके पास खुली दलीलें आ चुकी थीं, वे आपस में विभेद में पड़ गये। ऐसे लोगों के लिए बड़ा अज़ाब है। उस दिन जबकि कितने चेहरे उज्ज्वल होंगे और कितने ही चेहरे काले पड़

जायेंगे। जिन के मुंह काले पड़ जायेंगे (उनसे कहा जायेगा) क्या अपने ईमान के बाद तुम ने कुफ़्र किया ? तो जो तुम कुफ़्र करते थे उसके बदले में अब अज़ाब का मज़ा चखो। रहे वे लोग जिनके चेहरे उज्ज्वल होंगे, वे अल्लाह की दयालुता (की छाया) में होंगे जहां वे सदैव रहेंगे।' —आले इम्रान १०५-१०७

कितनी शिक्षाप्रद हैं ये आयतें ! इन आयतों से पता चलता है वि फूट और विभेद का परिणाम न केवल यह कि आखिरत में भीषण यातन के रूप में सामने आयेगा बल्कि इस अपराध का इस्लाम और ईमान से कुछ भी जोड़ नहीं। यह तो कुफ़्र की सहजात चीज़ है और इस की सज़ा भं कुफ़्र की सज़ा के सदृश्य है।

इस्लामी संगठन के आविर्भाव के लिए और उसे स्थाई रूप देने ह लिए इस्लाम की हिदायत यह है कि मुसलमानों का एक नेता होन चाहिए, जिसका आज्ञा-पालन अल्लाह और रसूल के आज्ञापालन के अन्तर्ग उनकी निर्धारित की हुई सीमाओं में उसी तरह जरूरी है, जिस तरह अल्ला और रसूल का आज्ञापालन ज़रूरी है। परन्तु झगड़े की सूरत में सब क अल्लाह और रसूल की तरफ़ पलटना चाहिए। क़ुरआन में है :—

'हे ईमान लाने वालो ! अल्लाह का हुक्म मानो और रसूल का हुक्म मानो और उनका भी जो तुम में अधिकारी लोग हैं, फिर यदि तुम्हारे बीच किसी बारे में झगड़ा खड़ा हो जाये तो उसे अल्लाह और रसूल की ओर ले आओ, यदि तुम अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखते हो। अच्छा (तरीक़ा) यही है और परिणाम की दृष्टि से भी यही उत्तम है।' —निसा ५९

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है :—

'जिस ने मेरी बात मानी उसने अल्लाह की बात मानी, किन्तु जिस ने मेरी नाफ़रमानी की, उसने अल्लाह की नाफ़रमानी की और जो अमीर (अध्यक्ष) का आज्ञापालन करता है, उसने मेरी आज्ञा का पालन किया और जो उसकी अवज्ञा करता है, उसने मेरी अवज्ञा की और इमाम (अध्यक्ष) तो ढाल है, जिसके पीछे रह कर युद्ध किया जाता है और (खतरों से) बचा जाता है।'

—बुखारी-मुस्लिम

इस हदीस से मालूम हुआ कि अमीर (अध्यक्ष) का आज्ञापाल अल्लाह और रसूल का आज्ञापालन ही है और अमीर की नाफ़रमा

अल्लाह और रसूल का नाफ़रमानी है। इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि अमीर का मौजूद होना और उसका आज्ञापालन करना इसलिए भी ज़रूरी है कि इसके बिना उम्मत की रक्षा करना और उसे खतरों और उपद्रवों से बचाना असंभव है। एक अन्य हदीस म है :—

'मुसलमान व्यक्ति पर अनिवार्य है कि वह (अपने अमीर की) सुने और आज्ञापालन करे। इन बातों में भी जो उसे पसन्द हों और उनमें भी जो उसे नापसन्द हों, जब तक कि उसे बुराई का हुक्म न दिया जाए। जब बुराई का हुक्म दिया जाए तो उसे न सुनना चाहिए और न आज्ञापालन करना चाहिए।'

—बुख़ारी-मुस्लिम

एक दूसरी हदीस में है :—

'(अमीर के) आज्ञापालन का परित्याग करने वाला जब अल्लाह से क़ियामत के दिन मिलेगा तो (उसकी पकड़ से बचने के लिए) उसके पास कोई दलील न होगी और जो व्यक्ति इस हालत में मर गया कि उसकी गर्दन प्रतिज्ञाबद्धता से मुक्त थी तो वह अज्ञान की मौत मरा।'

—मुस्लिम

इस हदीस से ज्ञात हुआ कि इस्लामी संगठन के बग़ैर ज़िन्दगी अज्ञान की ज़िन्दगी है।

मुसलमानों के बीच कितनी एकता होनी चाहिए, इसका अनुमान निम्नलिखित आयत से लगाया जा सकता है :—

'निस्सन्देह अल्लाह को वे लोग प्रिय हैं जो उसके रास्ते में पंक्ति-बद्ध होकर लड़ते हैं, जैसे वे सीसा पिलाई हुई दीवार हैं।'

—सफ़्फ़ ४

अर्थात अत्यन्त गम्भीर और ख़तरनाक स्थितियों में भी ईमान वालों की पंक्तियां अस्तव्यस्त नहीं होतीं, वे अल्लाह की ख़ुशी और दीन को ग़ालिब करने के लिए सीसा पिलाई हुई दीवार की तरह संगठित और मज़बूत होते हैं।

अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन हैं :—

'मोमिन और मोमिन आपस में दीवार की तरह होते हैं जिसका एक हिस्सा दूसरे हिस्से को ताक़त पहुंचाता है। फिर आप सल्ल० ने अपनी उंगलियों को एक दूसरे में डाल कर बताया कि ऐसे।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

निष्ठा

अल्लाह अपने बन्दों से क्या चाहता है ? यह बात पिछले पृष्ठों विस्तार से आ चुकी है। दीन के इन आदेशों पर प्रत्येक मोमिन के लि अमल करना अनिवार्य है और इन्हीं आदेशों पर उसकी दुनिया और आखि रत की सफलता निर्भर है। लेकिन दीन का कोई भी काम हो व अल्लाह के यहां उसी समय स्वीकृत होता है जबकि वह केवल अल्लाह व खुशी और आखिरत की मुक्ति और सफलता प्राप्त करने के लिए किय गया हो। जो काम दिखावे के लिए किया गया हो, या सांसारिक लाभ व प्रेरणा से किया गया हो तो, वह अल्लाह के यहाँ स्वीकार नहीं होगा, बल्कि करने वाले के मुंह पर मार दिया जायेगा। क़ुरआन में दिखावे को मुन फ़िक़ों का काम बताया गया है :—

'मुनाफ़िक़ अल्लाह को धोखा देने में लगे हुए हैं, जबकि अल्लाह खुद उन्हें धोखे में डाल रहा है। जब वे नमाज़ के लिए खड़े होते हैं तो सुस्ती से खड़े होते हैं, अभिप्राय लोगों को दिखाना होता है और अल्लाह को याद थोड़े ही करते हैं।' —निसा १४२

दिखावे के लिए वही लोग काम करते हैं, जो अल्लाह और आखि रत पर ईमान नहीं रखते। क़ुरआन में है :—

'हे ईमान वालो ! अपने सदक़ों को उपकार जता कर और दुख-दायक बातों से बर्बाद मत करो उस व्यक्ति की तरह, जो अपने माल को लोगों के दिखाने के लिए खर्च करता है, अल्लाह और आखिरत पर यक़ीन नहीं रखता।' —बक़र: २६४

अल्लाह के रसूल सल्ल० का कथन है :—

'कर्म तो बस नीयतों पर निर्भर करते हैं। आदमी को केवल वही मिलेगा जिसकी उसने नीयत की होगी, अतः जिसकी हिजरत अल्लाह और रसूल के लिए है, उसकी हिजरत अल्लाह और रसूल ही के लिए है। किन्तु जिसकी हिजरत दुनिया पाने या किसी औरत से शादी करने के लिए है तो उसकी हिजरत बस उसी के लिए हुई जिस के लिए उसने हिजरत की है।' —बुखारी, मुस्लिम

जिहाद की तरह हिजरत भी ईमान की कसौटी और बहुत बड़ी की है। मोमिन को यह क़ुरबानी कितनी बड़ी क़ुरबानी है कि वह अपने र, अपनी जायदाद, अपने कारोबार, अपने वतन और अपने नातेदारों को छोड़ कर अल्लाह के दीन पर अमल करने के लिए किसी अजनबी जगह चला जाता है। यह महान क़ुरबानी भी अल्लाह की नज़र से गिर जाती है, अगर इसके पीछे अल्लाह की खुशी और रसूल के आज्ञापालन के बजाए वास्तव में साँसारिक लाभों की प्राप्ति या किसी औरत से शादी करने की इच्छा काम कर रही हो। ऐसी हिजरत का आख़िरत में कोई फल प्राप्त नहीं होगा। एक अन्य हदीस में है :—

'क़ियामत के दिन सब से पहले उस व्यक्ति का फ़ैसला होगा जो शहीद हुआ था। उसे लाया जायेगा अल्लाह उसे अपनी नेमतें याद दिलायेगा वह उन्हें जानेगा। अल्लाह पूछेगा, तुम ने इन नेमतों को पाकर क्या किया ? वह कहेगा, मैं तेरे लिए लड़ा यहां तक कि शहीद हो गया। अल्लाह कहेगा तुम, झूठ बोलते हो तुम तो इसलिए लड़े थे ताकि लोग तुम्हें योद्धा कहें और ऐसा कहा भी गया। फिर उसके बारे में हुक्म होगा और उसे मुंह के बल घसीटा जायेगा और नरक में फेंक दिया जायेगा। फिर (फ़ैसले के लिए) एक ऐसे व्यक्ति को लाया जायेगा, जिसने (दीन की) शिक्षा प्राप्त की होगी और उसकी शिक्षा दी भी होगी और क़ुर-आन पढ़ा होगा। अल्लाह उस से भी अपनी नेमतों का वर्णन करेगा जिन्हें वह जानेगा। सवाल होगा तुम ने ये नेमतें पाकर क्या किया ? वह कहेगा, मैंने दीन की शिक्षा प्राप्त की थी उसको शिक्षा भी दी और तेरे लिए क़ुरआन पढ़ा। अल्लाह कहेगा, तुम झूठ बोलते हो, तुम ने शिक्षा प्राप्त की ताकि लोग तुम्हें विद्वान कहें और क़ुरआन पढ़ा ताकि कहा जाये वह तो क़ारी है, तो यह तुम्हें कह दिया गया, फिर हुक्म होगा और उसे मुंह के बल घसीट कर नरक में झोंक दिया जायेगा। फिर उस व्यक्ति को लाया जायेगा जिसे अल्लाह ने सम्पन्न बनाया होगा और उसे हर तरह का माल प्रदान किया होगा, अल्लाह उसे अपनी नेमतें याद दिलायेगा और उसे ये नेमतें याद भी आ जायेंगी। सवाल होगा तुम ने ये नेमत पाकर क्या किया ? वह कहेगा मैंने हर उस राह में तेरे लिए खर्च किया जिसमें खर्च करना तुझे पसन्द था, अल्लाह कहेगा, तुम झूठ बोलते हो असल बात यह है कि तुम ने तो इसलिए

खर्च किया ताकि लोग कहें कि यह तो बड़ा दानी है और ऐसा तुम्हें कहा भी गया। फिर आदेश होगा और उसे चेहरे के बल घसीट कर नरक में डाल दिया जायेगा।' —मुस्लिम

कितनी कंपा देने वाली है यह हदीस ! इन्सान के पास तीन तरह की शक्तियां होती हैं। १. शारीरिक, २. मांसिक और ३. आर्थिक। एक मोमिन की क़ुरबानी यह है कि इन शक्तियों को अल्लाह की राह में लगा दे, लेकिन अगर ये शक्तियां दीन की राह में शुद्ध हृदय के साथ न लगें बल्कि दिखावे और नाम कमाने के लिए लगें तो यह महान क़ुरबानी भी निरर्थक सिद्ध होगी, बल्कि ऐसा करना एक अपराध भी समझा जायेगा परिणाम स्वरूप वह नरक की आग में अत्यन्त तिरस्कृत दशा में झोंक दिया जायेगा, क्योंकि उसने अल्लाह की दी हुई शक्तियों का दुरुपयोग किया।

दीन की स्थापना

क़ुरआन में नबियों को भेजने, आसमानी किताबों के अवतरित करने और अल्लाह के दीन के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा :—

'उसने तुम्हारे लिए वही दीन निर्धारित किया है, जिसकी ताकीद उस ने नूह को की थी और जिसको वह्य (हे मुहम्मद !) हम ने तुम्हारी ओर की है और जिस को ताकीद हम ने इब्राहीम, मूसा और ईसा को भी की थी कि दीन को स्थापित करो और इस में छिन्न-भिन्न न हो।' —शूरा १३

अर्थात नबियों (अलैहि०) के भेजने और अल्लाह के दीन के आने का मूल उद्देश्य यही रहा है कि अल्लाह के दीन की स्थापना की जाए। अल्लाह का दीन क्या है ? यह चीज़ पिछले पृष्ठों में क़ुरआन और हदीस की रोशनी में स्पष्ट की जा चुकी है। 'दीन की स्थापना' का मतलब क्या है ? इसे जानने के लिए जरूरी है कि हम यह देखें कि क़ुरआन मजीद में शब्द इक़ामत (स्थापना) किन-किन अर्थों में आया है, सूरः क़ह्फ़ में है :—

'उन दोनों ने उस (बस्ती) में एक दीवार पाई, जो गिरने ही वाली थी तो उन्होंने उसे क़ायम कर दिया।' —कह्फ़ ७७

इस आयत में वास्तव में इक़ामत शब्द प्रयोग हुआ है उसका अर्थ है गिरने से बचा लेना और उसे सीधा खड़ा कर देना।

सूरः रहमान में है :—

'न्याय पूर्वक ठीक-ठीक तोलो और तोल में कमी मत करो।'

—९

यहां तोल में इक़ामत का मतलब है ठीक-ठीक तोलना।

सूरः तलाक़ में है :—

'और अल्लाह के लिए ठीक-ठीक गवाही दो।' —२

इस आयत में शहादत (गवाही) की इक़ामत का मतलब है ठीक-ठीक गवाही देना।

सूरः आराफ़ में है :—

'हर सज्दे के समय अपना रुख सीधा करो और अल्लाह को पुकारो, दीन (आज्ञापालन) को उसके लिए विशुद्ध करके।'

—२९

यहां रुख की इक़ामत का मतलब है शिर्क से बच कर अल्लाह की ठीक-ठीक इबादत।

सूरः रूम में है :—

'हर ओर से कट कर अपना रुख इस दीन की ओर जमा दो।'

—३०

कुछ आयतों के बाद फिर फ़रमाया—

'अपना रुख उस सीधे दीन की ओर रखो इससे पहले कि वह दिन आये जिसे अल्लाह की तरफ़ से आने से कोई रोक न सकेगा, उस दिन लोग एक दूसरे से अलग हो जायेंगे।' —४३

इन आयतों में दीन के लिए रुख की इक़ामत का मतलब है, हर तरफ़ से एकाग्र हो कर निष्ठा और दृढ़ता के साथ अल्लाह के दीन की ठीक-ठीक पैरवी।

क़ुरआन में नमाज़ क़ायम करने का वर्णन विभिन्न तरीक़ों से बहुत से स्थानों पर आया है, हम यहां केवल दो-तीन आयतें ही पेश करेंगे।

'नमाज क़ायम करो, सूरज के ढलने से लेकर रात के अन्धेरे तक और प्रातः काल के क़ुरआन को भी लाज़िम कर लो।'

—बनी इस्राईल ७८

सूरः निसा में है :—

'जब तुम्हें इत्मीनान हो जाए तो नमाज़ क़ायम करो, निस्सन्देह ईमान वालों के लिए वक़्त की पाबंदी के साथ नमाज़ अदा करना

ज़रूरी है। —१०३

सूरः नूर में है :—

'ये वह लोग हैं जिन्हें व्यापार और लेन-देन अल्लाह की याद और नमाज़ क़ायम करने और ज़कात देने से ग़ाफ़िल नहीं करते।'

—३७

इन आयतों में नमाज़ क़ायम करने का मतलब है नमाज़ की पाबंदी, नियमानुसार उस का आयोजन और उस का पूरा-पूरा हक़ अदा करना।

सूरः बक़रः में है :–

'अगर तुम्हें यह डर हो कि वे दोनों (पति-पत्नी) अल्लाह की सीमाओं को क़ायम न रख सकेंगे तो जो कुछ देकर स्त्री छुटकारा प्राप्त करना चाहे इस में उन दोनों के लिए कोई दोष नहीं। ये अल्लाह की सीमायें हैं, तो इन का उल्लंघन न करना, जो लोग अल्लाह की सीमाओं का उल्लंघन करते हैं, वही लोग ज़ालिम हैं।

—२९

इस आयत में अल्लाह की सीमाओं की इक़ामत का मतलब है, सामाजिक जीवन में अल्लाह के आदेशों का पूरा-पूरा आदर करना और पूरे तौर से उनका पालन करना और अल्लाह की सीमाओं का उल्लंघन करने का मतलब है, जानते-बूझते अल्लाह के आदेशों की अवहेलना करना। सूरः मायदा में किताब वालों के संबंध में है :—

'अगर किताब वाले ईमान लायें और डर रखें, तो हम उन से उनकी बुराइयां दूर कर दें और उन्हें नैमत भरी जन्नत में दाखिल करें।' —६५

इस आयत में किताब वालों से मुक्ति और स्वर्ग की नैमतों का वायदा ईमान और परहेज़गारी की बुनियाद पर किया गया है, अर्थात अगर वे ईमान लाकर पूरी जिंदगी में चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामूहिक अल्लाह की नाफ़रमानी से बचें तो वे अल्लाह के यहां मुक्ति और नेमतों भरी जन्नत के अधिकारी हों।

इसके बाद यह आयत आई है :—

'अगर वे तौरात और इंजील को और जो कुछ भी उनके रब की तरफ़ से उनकी तरफ़ उतरा, उसे क़ायम करते, तो उन्हें अपने ऊपर से और अपने क़दमों के नीचे से भी खाने को मिलता। उन में से एक गिरोह संतुलित नीति पर है, किन्तु उन में बहुतेरे ऐसे

हीं हैं जो बुरे काम करते हैं।' —मायदा ६६

इस आयत में तौरात, इंजील और अल्लाह की तरफ़ से आई हुई सरी चीज़ों की इक़ामत का मतलब है, पूरी ज़िंदगी में उन पर ठीक-ठीक मल करना व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन के दोनों पहलुओं में अल्लाह आदेशों को पूर्ण रूप से व्यवहारतः अपनाना। यह बात क़ुरआन और तौरात दोनों से स्पष्ट है कि तौरात में सामूहिक जीवन और राजनीति सम्बन्धित आदेश भी थे और विभिन्न अपराधों के सिलसिले में दण्ड संहिता भी—जैसा कि स्वयं क़ुरआन में ऐसे आदेश हैं—और तौरात की क़ामत का मतलब इन सभी आदेशों पर अमल करना और इन सब को पूर्ण रूप से लागू और स्थापित करना है।

एक और आयत के बाद फिर फ़रमाया गया :—

'कह दो! हे किताब वालो! तुम तो किसी चीज़ पर नहीं हो, जब तक कि तुम तौरात और इंजील को और जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी ओर उतारा गया है, उसे क़ायम न करो।'
—मायदा

इस आयत में भी तौरात, इन्जील और ईश्वरीय ग्रंथों की इक़ामत का मतलब अल्लाह के सभी आदेशों पर अमल और उनको पूर्ण रूप से लागू करना है और यही वास्तव में अल्लाह के दीन की स्थापना है। क़ुरआन के इन प्रयोगों से मालूम हुआ कि दीन को क़ायम करने का मतलब है, अल्लाह के दीन पर पूरे तौर से अमल करना, अल्लाह के आदेशों का ख़्याल रखना, सच्चे दिल से एकाग्र होकर दृढ़तापूर्वक एक साथ अल्लाह के दीन का हक़ अदा करना और जीवन के व्यक्तिगत और सामूहिक सभी भागों में सत्य धर्म को क़ायम और लागू करना। दूसरे शब्दों में यह कि दीन की उन सभी ज़िम्मेदारियों को भली-भांति पूरा करना, जो क़ुरआन और हदीस में उल्लिखित हैं और जिनकी संक्षिप्त रूप-रेखा पिछले पृष्ठों में आ चुकी है।

दीन पर व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों जीवनों में अमल, दीन के आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक आदेशों को क्रियान्वित रूप देना, दण्ड संहिता को लागू करना भलाई पर उभारना और बुराई से रोकना, इस्लामी क़ानून के अनुसार अदालतें स्थापित करना और इस्लामी राज्य की स्थापना उसी समय सम्भव है जबकि हुकूमत की बागडोर सत्यवादियों के हाथों में हो और सत्य धर्म पराधीन नहीं बल्कि प्रभुत्वशाली व्यवस्था के रूप में सामने आये, क्योंकि इसके बिना पूर्ण धर्म-स्थापना की कल्पना नहीं

की जा सकती, अतः दीन को ग़ालिब करने की कोशिश भी दीन को ग़ालिब करने का एक हिस्सा ही है। यही कारण है कि अल्लाह के रसूल दीन की सिर्फ़ दावत देने के लिए नहीं आये, बल्कि उसे ग़ालिब करने आये थे :—

'वह अल्लाह ही है जिस ने अपने रसूल को हिदायत और सत्य-धर्म देकर भेजा, ताकि उसे तमाम के तमाम धर्म पर ग़ालिब कर दें, चाहे मुश्रिकों को यह कितना ही ना-पसन्द हो।' —सफ़्फ़ ९

और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुस्लिम समुदाय पर अल्लाह की राह में जिहाद अर्थात दीन को ग़ालिब करने की ज़िम्मेदारी डाली गई और स्पष्ट शब्दों में बताया गया कि इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने के बाद ही वह दुनिया में अल्लाह की मदद और आख़िरत में नरक की यातनाओं से मुक्ति और स्वर्ग की सदैव रहने वाली नेमतों के अधिकारी हो सकते हैं। अतएव इस आयत के तुरन्त बाद फ़रमाया :—

'हे ईमान लाने वालो ! क्या मैं तुम्हें ऐसा व्यापार बताऊं, जो तुम्हें दुखदायनी यातना से बचाए। अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाओ और अल्लाह की राह में अपने माल और अपनी जान से पूरा प्रयास करो, तुम्हारे लिए अच्छा यही है, अगर तुम जानते। इस सूरत में वह तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा और तुम्हें ऐसे बाग़ों में दाखिल करेगा, जिसके नीचे नहरें बहती होंगी और वह अच्छे पवित्र महलों में जगह देगा, जो शाश्वत बाग़ों में होंगे। यही महान सफलता है और एक और चीज़ प्रदान करेगा, जो तुम्हें प्रिय है, वह अल्लाह की मदद और निकट ही प्राप्त होने वाली विजय है। और (हे नबी) ईमान वालों को शुभ सूचना दे दो।' —सफ़्फ़ १०-१३

दीन की स्थापना अपने इस व्यापक अर्थ में (जिस में दीन का पूरा पूरा सच्चे दिल से पालन, दीन की ओर बुलाना, इस्लाम की गवाही, अल्लाह के दीन का बोल-बाला करना और अल्लाह की डाली हुई सभी ज़िम्मेदारियों को अदा करना शामिल है।) नबियों के आने, आसमानी किताबों के उतरने और अल्लाह के दीन के जीवन-विधान रूप पाने का मूल उद्देश्य है। प्रत्येक काम में ईमान वालों से जो अल्लाह के दीन पर ईमान लायें, दीन की स्थापना की अपेक्षा की गई, इस मार्ग पर संगठित और एकमत होकर चलने को कहा गया। दुनिया और आख़िरत की कामियाबी का एक ही रास्ता यही है और यही प्रत्येक मुस्लिम और पूरे मुस्लिम समुदाय का लक्ष्य और जीवन उद्देश्य है।